Monographs of the Department of Ancient Indian History, Culture and Archaeology

Editor :

Professor A. K. NARAIN

No. 4

SARASVATI

By

SUSHILA KHARE, M. A.

BANARAS HINDU UNIVERSITY

VARANASI—5

1967

प्राचीन भारतीय संस्कृति में

सरस्वती

(ब्राह्मण परम्परा के विशेष संदर्भ में)

सुशीला खरे, एम. ए.

काशी विश्वविद्यालय
वाराणसी-५
१९६६

प्रकाशक
अध्यक्ष, प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग
काशी विश्वविद्यालय
वाराणसी

प्रथम संस्करण, १९६६
पाँच रुपए

मुद्रक
लक्ष्मीदास
बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी प्रेस, वाराणसी–५

प्राक्कथन

भारतीय संस्कृति में सरस्वती का अपना एक विशिष्ट और महत्वपूर्ण स्थान है। उनकी कल्पना बहुविध उदात्त, मनोहारी एवं रोचक है। प्राचीन वैदिक-युग से वर्तमान समय तक देवी सरस्वती भारतीय संस्कृति को निरन्तर प्रेरणा प्रदान करती रही हैं। ये विद्या-बुद्धि-ज्ञान की देवी हैं, साहित्य और ललित कलाओं की अधिष्ठातृ हैं तथा विद्वद्जनों की दृष्टि में सर्वश्रेष्ठ देवी के रूप में प्रतिष्ठित हैं। सरस्वती साहित्य-सेवियों की आराध्या और संगीतज्ञों की इष्ट देवी है। विद्या और ज्ञान की देवी के रूप में इनकी कल्पना अत्यन्त उदात्त है, जो उनके दुग्धधवल, शुभ्र-वर्ण की भाँति ही निर्मल है। पौराणिक तथा तांत्रिक युग की लौकिक उर्वरता में भी सरस्वती का सौम्य, निष्कलुष रूप दीप्तिमान रहता है। यथार्थतः देवी सरस्वती भारतीय संस्कृति के उच्चतम आदर्श की प्रतीक हैं।

प्रस्तुत निबन्ध, प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्त्व की १९६३-६४ की एम. ए. परीक्षा के एक प्रश्न-पत्र के स्थान पर प्रस्तुत किया गया था। इसमें ब्राह्मण परम्परा के संदर्भ में सरस्वती का सामान्य विवेचन है। फिर भी विषय की आवश्यकता को देखते हुये, मुख्यतया मूर्तिविधानीय प्रकरण के लिए आगम, जैन और बौद्ध साहित्य का भी उपयोग किया गया है।

यह निबन्ध पाँच मुख्य अध्यायों में विभाजित है। प्रथम अध्याय सम्पूर्ण निबन्ध की भूमिका के रूप में है। यहाँ देवी सरस्वती का संक्षिप्त परिचय दिया गया है, उनके रूप, वाहन, आयुधों के गूढ़ प्रतीकात्मक अर्थ दिये गये हैं और प्राचीन भारतीय संस्कृति में उनके स्थान का मूल्यांकन करने की चेष्टा की गई है। सरस्वती की उत्पत्ति और क्रमिक विकास के इतिहास का अध्ययन द्वितीय अध्याय से प्रारम्भ होता है। इस अध्याय में वैदिक साहित्य में सरस्वती के नदी-रूप, सुख, समृद्धि तथा सन्तानदातृ देवी-रूप, देवताओं के शत्रुओं का हनन करने वाली एवं अन्य देवताओं जैसे इन्द्र, मरुद्गणों, अश्विनों तथा इला और भारती देवियों के साथ सम्बन्धित रूपों की भी चर्चा की गई है। अथर्ववेद में सरस्वती का भी स्वाभाविक ढंग से तंत्र-मंत्र आदि में प्रयोग हुआ है।

तृतीय अध्याय के अन्तर्गत आदि काव्यों - रामायण तथा महाभारत—में सरस्वती के नदी-रूप, देवी-रूप, वाणी और मानवी-रूप आदि का वर्णन किया गया है। इसी अध्याय में देवी के ऋषि दधीचि और राजा मतिनार एवं देवताओं --इन्द्र, अग्नि, ब्रह्मा तथा दुर्गा इत्यादि से सम्बन्धित रूपों की भी चर्चा है।

चतुर्थ अध्याय में पुराणों में सरस्वती का विविध रूप वर्णित है। इस अध्याय के प्रारम्भ में यह प्रदर्शित करने की चेष्टा की गई है कि देवी के वैदिक स्वरूप का ही पौराणिक सरस्वती के रूप में परिवर्तित हुआ। पुराणों में सरस्वती की उत्पत्ति, सरस्वती के विविध विशेषणों, विभिन्न देवी-देवताओं से सम्बन्ध की भी यहाँ चर्चा है। इन देवी-देवताओं में जो सरस्वती से सम्बन्धित हैं, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, शतरूपा, सावित्री-गायत्री, लक्ष्मी गन्धर्व आदि विशेष रूप से उल्लिखित हैं। पुराणों में सरस्वती के घोर-रूप, पार्थिव-शरीर, वस्त्राभूषण, आयुध, और उनके पूजन आदि का भी उल्लेख किया गया है।

पंचम अध्याय में शिल्प में सरस्वती का वर्णन है। इसके अन्तर्गत ब्राह्मण-परम्परा के ग्रन्थों तथा जैन और बौद्ध-साहित्य में देवी के प्रतिमा निर्माण के आदेशों की चर्चा है, और साथ ही विभिन्न संग्रहालयों में सुरक्षित सरस्वती की प्रमुख मूर्तियों का भी यथासंभव वर्णन किया गया है। आवश्यकतानुसार विभिन्न मूर्तियों के चित्र भी दिये गये हैं।

निबन्ध के अन्त में विभिन्न परिशिष्टों में सरस्वती शब्द की व्युत्पत्ति, अर्थ, ऋग्वेद के दसवें मंडल के १२५ वें सूक्त का वर्णन है। अन्त में फलक-सूची तथा सहायक-ग्रंथ-सूची भी सलग्न है।

अपना कथन समाप्त करने के पूर्व श्रद्धेय गुरुजनों के प्रति आभार-प्रदर्शन अपना पवित्र कर्तव्य समझती हूँ। इस निबन्ध को लिखने की प्रेरणा और प्रोत्साहन प्रधानाचार्य तथा विभागाध्यक्ष डा० अवध किशोर नारायण जी से मिली। डा० वासुदेव शरण जी अग्रवाल ने निबन्ध की प्रारम्भिक रूपरेखा निर्धारित करने तथा पं० राजमोहन उपाध्याय ने सामग्री के संलग्न में सहायता की है। मैं इन श्रद्धेय गुरुजनों को किन शब्दों में धन्यवाद दूँ और अपना आभार प्रदर्शन करूँ, क्योंकि मेरे शब्द मेरी भावनाओं को उचित रूप से व्यक्त न कर सकेंगे।

श्री जगदीश नारायण तिवारी के प्रति भी मैं आभार-प्रदर्शन करती हूँ जिन्होंने समय-समय पर अपनी सम्मतियों द्वारा सदैव प्रोत्साहन दिया।

मैं डा० अवधकिशोर नारायण की विशेष रूप से आभारी हूँ जिन्होंने कृपाकर इस ग्रंथ का प्रकाशन विभागीय 'नोट्स एण्ड मोनोग्राफ सीरीज' के पाँचवें ग्रंथ के रूप में स्वीकार किया।

सुशीला खरे

विषयानुक्रमणिका

संक्षिप्त-संकेत सूची

१	अ० पु०	अग्नि पुराण	४९-१५	अध्याय-श्लोक
२	अ० वे०	अथर्व वेद	३-२०-७	खण्ड-अध्याय-मंत्र
३	ए० ब्रा०	ऐतरेय ब्राह्मण	२-३-१९	अध्याय-खंड-श्लोक
४	ऋ० वे०	ऋग्वेद	१-३-१०	मण्डल-सूक्त-मंत्र
५	च० चि०	चरक चिकित्सा		
६	छ० उ०	छान्दोग्य उपनिषद्	३-१६-३	अध्याय-खण्ड-मंत्र
७	दे० भा० पु०	देवी भागवत पुराण	९-४-७५	स्कन्ध-अध्याय-श्लोक
८	नि०	निरुक्त	११-२७	अध्याय-पदखण्ड
९	नै०	नैघण्टुक	५-५	अध्याय-पदखण्ड
१०	प० पु०	पद्म पुराण	५-२७-११८	खण्ड-अध्याय-श्लोक
११	प्रा० र०	प्राधानिक रहस्य		
१२	ब्र० पु०	ब्रह्म पुराण	१०१-४	अध्याय-श्लोक
१३	ब्र० वै० पु०	ब्रह्म वैवर्त पुराण	१-३-५४	खण्ड-अध्याय-श्लोक
१४	ब्रह्माण्ड पु०	ब्रह्माण्ड पुराण	३-३५-४४	पाद-अध्याय-श्लोक
१५	भा० पु०	भागवत पुराण	३-१२-२९	स्कन्ध-अध्याय-श्लोक
१६	भा० प्र०	भाव प्रकाश		
१७	म० पु०	मत्स्य पुराण	३-३२	अध्याय-श्लोक
१८	महा०	महाभारत	९-३७	पर्व-अध्याय
१९	मा० पु०	मार्कण्डेय पुराण	२३-३०	अध्याय-श्लोक
२०	रामा०	रामायण	१-७१-५	काण्ड-सर्ग-श्लोक
२१	लि० पु०	लिंग पुराण	१-२२-२४	खण्ड-अध्याय-श्लोक
२२	वा० सं०	वाजसनेयि संहिता	१९-१२	अध्याय-मंत्र
२३	वा० पु०	वामन पुराण	४०-१४	अध्याय-श्लोक
२४	वायु० पु०	वायु पुराण	१-९-६७	खण्ड-अध्याय-श्लोक
२५	वि० ध० पु०	विष्णु धर्मोत्तर पुराण	१-३-५	खण्ड-अध्याय-श्लोक
२६	वि० पु०	विष्णु पुराण	१-७-१५	अंश-अध्याय-श्लोक
२७	वै० र०	वैकृतिक रहस्य		
२८	स्क० पु०	स्कन्द पुराण	६-४६-२८	खण्ड-अध्याय-श्लोक
२९	श० ब्रा०	शतपथ ब्राह्मण	३-९-१-७	काण्ड-अध्याय-ब्राह्मण-खण्ड
३०	सु० चि०	सुश्रुत चिकित्सा		
३१	सु० सं०	सुश्रुत संहिता		
३२	शौ० तं०	शौढल तंत्र		

प्रथम अध्याय

सरस्वती परिचय

देवी सरस्वती का हिन्दू-धर्म में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। ये भारत की प्रमुख देवियों में से एक हैं। जिस प्रकार विष्णु की शक्ति को लक्ष्मी तथा शिव की शक्ति को उमा अथवा गौरी कहा गया है, उसी प्रकार से ब्रह्मा की शक्ति को सरस्वती के नाम से सम्बोधित किया गया है।

सरस्वती का शाब्दिक अर्थ है, जल से उत्पन्न[1] और इस प्रकार जल से देवी सरस्वती का अभिन्न सम्बन्ध है। वैदिक काल में सरस्वती सबसे अधिक पवित्र नदी के रूप में वर्णित हैं। आजकल भी भारतीय उन्हें उतना ही पवित्र मानते हैं और यह विश्वास करते हैं कि यह नदी अदृश्य रूप से प्रवाहित होती है।

सरस् (सरः) शब्द का, जिससे सरस्वती शब्द निष्पन्न हुआ है, वास्तविक अर्थ है 'सरणम्' या 'प्रसरणम्' अर्थात् हिलने वाला, सरकने वाला, बहने वाला इत्यादि। स्वाभाविक रूप से इसका सम्बन्ध जल और वाक् दोनों से हुआ है, क्योंकि दोनों में यह गुण विद्यमान है। परन्तु, सरस् शब्द का आध्यात्मिक अर्थ भी लिया जा सकता है—ब्राह्मसर के रूप में, जो अक्षय तथा अमृत से परिपूर्ण सरोवर है। ब्राह्मसर का अर्थ है, ब्रह्म का सरोवर, जो प्रकृति और उससे परे सभी क्रियात्मक शक्तियों का स्रोत हो अथवा दूसरे शब्दों में, जो संसार का मूल है। देवी सरस्वती उसी सरोवर से उत्पन्न हैं। इसी कारण इनका नाम है सरस्+वती अर्थात् उस अक्षय (अमृत) सरोवर से उफनकर निकली हुई देवी, जो आध्यात्मिक रूप से ब्रह्मा की शक्ति है और भौतिक रूप से एक पवित्र नदी[2]।

ब्राह्मण धर्म में सरस्वती को ब्रह्मा की पत्नी के अतिरिक्त कई स्थलों पर उनकी पुत्री भी कहा है और इसका वर्णन कई पुराणों में मिलता है[3]। ब्राह्मण धर्म में अधिकतर इन्हें विद्या, ज्ञान और विवेक की देवी कहा गया है। इसी कारण इनका दूसरा नाम देवी वाणी भी है। मनुष्य के अन्दर जो ज्ञान हैं, वे वाणी के द्वारा ही व्यक्त किए जा सकते हैं, इसीलिए इन्हें वाग्देवता भी कहा गया है।

ब्राह्मण धर्म में ये कला और संगीत की देवी भी कही गई हैं। देवी सरस्वती की कृपा से स्वर, ग्राम, मूर्च्छना आदि संगीत सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त होते हैं, ऐसा माना जाता है। मार्कण्डेय पुराण के एक आख्यान के अनुसार नागराज अश्वतर ने देवी सरस्वती की उपासना से संगीत विद्या में निपुणता प्राप्त की थी और फिर इसी विद्या की सहायता से शिव जी को प्रसन्न करके उनसे वरदान प्राप्त किया था[4]।

---

[1] सरस्वती शब्द की व्युत्पत्ति के विस्तृत विवेचन के लिए, देखिए, परिशिष्ट संख्या (१), पृष्ठ--१९५।

[2] वासुदेव शरण अग्रवाल, "Emblem of the Banaras Hindu University Goddess Sarasvati."
प्रज्ञा, Vol. VIII (2), March, 1963, पृष्ठ संख्या—१

[3] सरस्वत्यथ गायत्री ब्राह्मणी च परंतप।
ततः स्वदेहसंसूतामात्मजामित्यकल्पयत ॥ (म० पु० ३-३२)
'ब्रह्म सुता' (ब्रह्माण्ड पुराण—३-३५-४४)।

[4] मार्कण्डेय पुराण--त्रयोविंशोऽध्याय—नागराज अश्वतर की कथा।

देवी सरस्वती को दुग्ध-धवल वर्ण वाली, वीणा, पुस्तक धारण करने वाली[१] तथा जल के ऊपर कमल के आसन पर आसीन रहने वाली कहा गया है। वीणा और पुस्तक इनके विशिष्ट चिन्ह हैं। इनका वाहन हंस कहा जाता है, जो इनके पति ब्रह्मा का भी वाहन है। इनके इस लौकिक स्वरूप, वर्ण, आयुधों, वाहन, जल और कमल के भी आध्यात्मिक अर्थ बताये जा सकते हैं। देवी का श्वेतवर्ण उनके सत्व गुण का प्रतीक है। जल इस पृथ्वी का सार है, जो मन के सिद्धान्त को प्रदर्शित करता है। इसीलिए इसे ऋत भी कहते हैं। यह सम्पूर्ण जगत ऋत से ही उत्पन्न है, और इस प्रकार सरस्वती भी ऋत की पुत्री हैं। यह सम्पूर्ण संसार ऋत के ऊपर कमल के समान तैरता है। इस प्रकार कमल आदि जल या ऋत की सर्जनात्मक शक्ति का प्रतीक है। सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी कमल के गूढ़ प्रतीकात्मक अर्थ हैं। मानव—विग्रह के अन्तर्गत विभिन्न नाड़ी चक्रों को कमल की संज्ञा दी गई है और मनस् को सहस्रदल कमल कहा गया है। कमल जीवन संगीत का सबसे महान् प्रतीक कहा जा सकता है[२]।

ब्रह्मा और सरस्वती दोनों का वाहन हंस है, जो उन्हें अन्तरिक्ष (अर्थात् मानव लोक से ब्रह्मलोक) तक ले जाता है। हंस के भी गूढ़ प्रतीकात्मक अर्थ हैं[३]। ब्राह्मण धर्म में तो हंस परमेश्वर का प्रतीक माना जाता है। जीव, जो परमात्मा का अंश माना गया है, उसे भी हंस कहा गया है। जिस प्रकार जीव पृथ्वी पर अवस्थित होने पर भी संसार से बंधा नहीं है, उसी प्रकार जल में विहार करने वाला हंस भी जलाशय से बंधा नहीं है। जल से परे रहकर वह आकाश में भी उन्मुक्त भाव से उड़ान भरता है, और जल के समान आकाश से भी वह अपनापन अनुभव करता है[४]। वह प्रत्येक वर्ष मानसरोवर जाता है। श्वेतवर्णीय हंस पवित्रता, स्वच्छता का प्रतीक है। माया रहित जीव के सत्वगुण को भी शुभ्रवर्ण का कहा गया है[५]। दूसरे शब्दों में हंस जीवात्मा का प्रतीक है। जिस प्रकार हंस नीर और क्षीर का विवेचन करता है, उसी प्रकार ईश्वर के अंश (हंसरूपी) जीव में सत्य और असत्य, पुण्य और पाप, ज्ञान और अज्ञान तथा जीवन और मृत्यु के विवेचन की क्षमता होती है। बौद्ध धर्म में भी हंसों का बहुत महत्त्व है। कई जातकों में बोधिसत्त्व को हंस के रूप में जन्म लेने वाला कहा गया है और उड़ते हुए हंसों की पंक्तियों का भी धार्मिक महत्त्व है, जिनका चित्रण बौद्ध मूर्ति कला में हुआ है[६], जैसे लौरिया नन्दन गढ़-स्तम्भ, रमपुरवा स्तंभ, सांची स्तम्भ, बोध गया आदि में उत्कीर्ण हंसों की पंक्तियाँ हैं।

देवियों तथा देवताओं के हाथों में विभिन्न प्रकार के आयुध दिखाये जाते हैं, जिनके द्वारा उनकी पहिचान होती है। देवी सरस्वती के चारों हाथों में वीणा, अक्षमाला, पुस्तक और अभयमुद्रा का प्रदर्शन हुआ है और इनके भी गूढ़ अर्थ हैं। प्रथम तो ये आयुध पराशक्ति रूप वाणी के ही प्रतीक कहे जा सकते हैं और शब्द

---

[१] आविर्बभूव तत्पश्चात्मुखतः परमात्मनः।
एका देवी शुक्लवर्णा वीणापुस्तकधारिणी ॥

(ब्र० वै० पु० १-३-५४)

[२] वासुदेव शरण अग्रवाल, वही, पृ०—२

[३] वही, पृ०—२

[४] डा० विन्देश्वरी प्रसाद सिंह—भारतीय कला को बिहार की देन (पहला अ० पृ० सं० २९)

[५] वही

[६] वही, पृ० सं० ९२।

की चार अवस्थाएँ—परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी—प्रदर्शित करते हैं, जिसके द्वारा देवी समस्त ब्रह्माण्ड पर नियन्त्रण करती हैं। निर्गुण और नामरूपातीत पूर्ण ब्रह्म जितना व्यापक है, उसकी शक्ति भी—जो वाचक स्वरूप वाणी है—उतनी ही व्यापक है[१]। इसके अतिरिक्त आयुधों के स्वतन्त्र रूप से निम्नलिखित अर्थ कहे जा सकते हैं[२]।

(१) वीणा

मौन धारण करके, तन्तु या तन्त्री के नाद से, ब्रह्म के अस्तित्व का बोध कराने के लिए ही वाणी ने वीणा को धारण किया है। वीणा के तन्तु ज्ञान के रूप हैं, जिसे दूसरे शब्दों में चेतना का रूपक कहा जा सकता है। वीणा धारण करने के कारण ही देवी को वीणापाणि कहा गया है। जिसका प्रधान अर्थ है—मौन रहते हुए भी ज्ञान कराने वाली। यही नाद ब्रह्म का तत्व है, उसी में एक अलौकिक रस है—जिसके श्रवण मात्र से उस रस का अनुभव होता है।

(२) अक्षमाल

सरस्वती के हाथ में जो माला है, वह अक्षों की है। अकार से इकार तक जो वर्ण हैं, वह भगवान रुद्र के डमरू के नाद से निकले हुए माने गये हैं :—"नृत्तावसाने नटराजराजो ननाद ढक्कां नव पंचवारम्"—रुद्र के ताण्डव नृत्य के बाद डमरू के नाद से निकले हुए "अइउण्"—आदि चौदह सूत्र प्रसिद्ध हैं। "अकार" से आरम्भ कर "क्षकार" तक के अक्षरों की माला से ही जप करने का विधान है।

(३) पुस्तक

सरस्वती के हाथ में पुस्तक, शब्द-शक्ति का स्वरूप है, उन्हीं अक्षरों के योग से जो शब्द बने हैं, उससे ही अर्थ-ज्ञान होता है। "पुस्तक" के प्रतीक में जैसे शब्द-वाक्य आदि गद्य रूप हैं, वैसे ही पद-पाद-पद्य आदि छन्दोमय रूप भी हैं। यह सभी वाणी के ही स्वरूप हैं। इसी तत्त्व का उल्लेख महा कवि कालिदास ने इस प्रकार किया है :—

वागर्थाविव संपृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ॥ रघुवंश, १।१

(४) अभय मुद्रा

सरस्वती का अभय मुद्रा में स्थित चौथे हाथ का तात्पर्य यह है कि उपर्युक्त तीनों साधनों के शक्ति रूप "शास्त्रों" से देवी जिस ज्ञान रस का वितरण कर रही हैं, उसी ज्ञान से अभय रूपी शान्ति रस का भी विवरण करती हैं। इस प्रकार सरस्वती ज्ञान द्वारा अभय प्रदान करती हैं।

देवी सरस्वती की भुजाओं तथा उनमें स्थित आयुधों के अन्य आध्यात्मिक अर्थ भी दिखाए गए हैं। विष्णुधर्मोत्तर के अनुसार देवी की चार भुजाएँ चारों वेदों—ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद—को प्रदर्शित करती हैं। दाहिनी ओर के दोनों हाथों में से एक में पुस्तक सब शास्त्रों का प्रतिनिधित्व करती है, और दूसरे हाथ की अक्ष माला "काल" (समय) को प्रदर्शित करती है, सब शास्त्रों का सार तत्व "अमृत रस" देवी के

---

[१] ब्रह्मर्षि देवरात जी, "संगीत विद्या" नाद रूप, श्रीकला संगीत भारती, प्रथम दशक पूर्ति समारोह विशेषांक, जनवरी, १९६१।

[२] वही, पृष्ठ संख्या—७५।

बांयें हाथों में से एक में स्थित कमण्डलु में वर्तमान है, तथा दूसरे हाथ में धारण की हुई वीणा स्वयं मूर्तिमान सिद्धि है[१]।

वाणी, विद्या, ज्ञान, संगीत का आदर्श जीवन में कितना अधिक महत्वपूर्ण स्थान है, इसे प्राचीन भारतीय विचारकों ने भली-भाँति समझा था और इसी कारण मानव जीवन से सम्बन्धित विभिन्न धार्मिक कृत्यों तथा संस्कारों में इनकी अधिष्ठातृ देवता सरस्वती को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया था। संस्कारों की कल्पना ही उच्च आध्यात्मिक जीवन के आदर्श पर खड़ी की गई थी और इनमें प्राचीन भारतीय संस्कृति का मर्म छिपा है। वैदिक काल में गर्भधारण के सम्बन्ध में प्रार्थना की जाती थी—"विष्णु गर्भाशय निर्माण करें, त्वष्टा रूप सुशोभित करें, प्रजापति बीज वपन करें, धाता भ्रूण स्थापित करें, हे सरस्वति। भ्रूण को स्थापित करो, नील कमल की माला से सुशोभित दोनों आश्विन तुम्हारे भ्रूण को प्रतिष्ठित करें (ऋ० वे० १०।१८४)[२]। बालक के जात कर्म संस्कार में सद्योजात शिशु के दाहिने कान में "वाक्, वाक्, वाक्" मन्त्र सुनाने का विधान था (अथास्य दक्षिणं कर्णमभिनिधाय वाग् वाग् इति त्रिः, अथ दधि मधुघृतं सनीय अन्तर्हितेन जातरूपेण प्राशयति ॥ (बृ० उ० ६।४।२५)। यह बालक की वाणी में माधुर्य, वीर्यवत्ता, तेजस्वी स्वर और रस का संचार करने के लिए ही था[३]। जातकर्म संस्कार के पश्चात् बालक का स्तन पान कराने की व्यवस्था थी और इसके लिए सरस्वती के वैदिक मंत्र का विनियोग था। "अथैनं मात्रे प्रदाय स्तनं प्रयच्छति"। यस्ते स्तनः शशयो यो मयोभूर्येन विश्वा पुष्यसि वार्याणि। यो रत्नधा वसुविद् यः सुदत्रः सरस्वति तमिह धातवे कः॥ (ऋ० वे० १।१६४।४९) अर्थात् हे सरस्वती, सभी रसों से पूर्ण जो तेरा स्तन परम सुख देने वाला है, तू जिस स्तन से सभी प्राणियों का पोषण करती है, जो स्तन रमणीय, वरणीय और प्राण को चेतन बनाने वाला है, जो सभी ऐश्वर्य और सत्व गुण को धारण करता है, उस परम रस से पूर्ण स्तन को प्राणियों को पिलाने के लिए तू धारण करती है[४]। कर्ण वेध संस्कार के दिन केशव, हर, ब्रह्मा, सूर्य, चन्द्रमा, दिक्पाल, नासत्य, ब्राह्मण तथा गायों के साथ सरस्वती का भी पूजन किया जाता था[५]। मार्कण्डेय पुराण में वर्णित विद्यारम्भ संस्कार की विधि में विनायक, बृहस्पति और गृह देवता के साथ सरस्वती की पूजा बताई गई है[६]। बाद में उपनयन संस्कार के एक दिन पहले गणेश के आराधन और श्री, लक्ष्मी, धात्री, मेधा, पुष्टि, श्रद्धा, आदि देवियों के साथ सरस्वती की पूजा की भी व्यवस्था कर दी गई थी[७]। बौधायन गृह्य सूत्र के अनुसार विवाह संस्कार में विभिन्न धार्मिक कृत्यों के साथ अदिति, अनुमति, सरस्वति, सविता, प्रजापति के लिए होम की भी व्यवस्था थी[८]। इसी संस्कार में वधू द्वारा अश्मा-

---

[१] वेदास्तस्या भुजा ज्ञेयाः सर्वशास्त्राणि पुस्तकम् ॥ ३ ॥
सर्वशास्त्रामृतरसो देव्या ज्ञेयः कमण्डलुः ॥
अक्षमाला करे तस्याः कालो भवति पार्थिव ॥ ४ ॥
सिद्धि मूर्तिमती ज्ञेया वैष्णवी ······। (वि० ध० पु० चतुःषष्टितमोऽध्यायः)

[२] राजबली पाण्डेय—हिन्दू संस्कार, पृष्ठ संख्या ६०।

[३] ब्रह्मर्षि दैवरात जी, वही, पृ० सं० ७५-७६।

[४] वही, पृष्ठ सं० ७६।

[५] राजबली पाण्डेय—वही, पृष्ठ सं० १३३।

[६] वही, पृष्ठ सं० १४१।

[७] वही, पृष्ठ सं० १६५।

[८] वही, पृष्ठ सं० २६०।

रोहण की क्रिया के बाद वर द्वारा स्त्रियों की प्रशंसा में एक गीत गाने के लिए कहा गया है, जिसमें सरस्वती स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करती हैं—"हे सरस्वति ! अपने इस कार्य की पूर्ति करो, हे सुभगे ! हे उदार ! हम सर्वप्रथम तुम्हारीस्तुति करते हैं, तुम्हीं से सब कुछ उत्पन्न हुआ है तथा तुम्हीं में निवास करता है —" इत्यादि[१]।

विद्या की देवी सरस्वती की लोकप्रियता केवल ब्राह्मण धर्म तक ही सीमित नहीं थी। जैन धर्म और बौद्ध धर्म में भी इन्हें आदर का स्थान दिया गया है। जैन धर्म में विद्या की सोलह देवियाँ हैं और उनके अतिरिक्त एक श्रुत देवी भी हैं, जो ब्राह्मण धर्म की सरस्वती के अनुरूप हैं। जैन ग्रन्थों में इन्हें ब्रह्मा की पत्नी के बराबर का स्थान दिया गया है। ब्राह्मण धर्मावलम्बियों की तरह जैन लोग भी इनकी विशेष पूजा करते हैं। ज्येष्ठ मास के शुक्ल पंचमी को जैन ज्ञान 'पंचमी" कहते हैं और उस दिन श्रुत देवी की विधिवत् पूजा का विधान दिगम्बरों में है तथा कार्तिक मास की शुक्ल पंचमी को श्रुत देवी की पूजा का विधान श्वेताम्बरों में है।[२]

बौद्ध धर्म ने भी देवी सरस्वती को अपनाया और इन्हें विद्या तथा ज्ञान की देवी माना। बौद्ध ग्रन्थों ने इनके कई स्वरूपों का वर्णन किया है, जैसे महा सरस्वती, व्रज वीणा सरस्वती, व्रज शारदा सरस्वती, आर्य सरस्वती, व्रज सरस्वती इत्यादि[३]। इन सब के पूजन का भी बौद्ध धर्म में अपना विशिष्ट ढंग है।

आयुर्वेद शास्त्र में भी सरस्वती का प्रयोग हुआ है और यहाँ पर भी इसका सम्बन्ध मेघ (मस्तिष्क) के रोगों से है अर्थात् यह औषधि नाड़ी संस्थान पर कर्म करने वाली है। साधारण बोल चाल में इसे "ब्राह्मी" कहते हैं, किन्तु इसका शुद्ध आयुर्वेदिक नाम "मण्डूक पर्णी" है जिसे बंगला में "थुलकुडी" मराठी में "करिवणा" गुजराती में "खड्ब्राह्मी", तामिल में "वाल्लरीकिरि" तेलगू में "मण्डूकब्राह्मी" तथा अंग्रेजी में "हाइड्रोकोटाइल एशियाटिका" (Hydrocotyle Asiatca) कहते हैं। "यह औषधि" "घातपुष्पा कुल" (Umbellifarae Family) की तथा भूमि पर फैलने वाली लता है, जो भारत तथा लंका में सर्वत्र जलाशयों के किनारे विशेष कर वर्षा ऋतु में पाई जाती है। इसके काण्ड के प्रत्येक पर्व से मूल, पत्र, पुष्प तथा फलों का उद्गम होता है। कहा जाता है कि इसका प्रचार मण्डूक ऋषि द्वारा हुआ था। संभवतः इसी से यह मण्डूक पर्णी कहलाई। गुण में[४] यह औषधि त्रिदोषात्मक है, किन्तु विशेषतः कफ और पित्त का शमन करती है। मधुर विपाक होने से

---

[१] राजबली पाण्डेय वही, पृष्ठ सं० २७७। [२] कैलाश चन्द्र शास्त्री -जैनधर्म, पृष्ठ सं० ३०७--३०८।

[३] विन्देश्वरी प्रसाद सिंह, वही, परिशिष्ट २, पृष्ठ सं० १७१।

[४] "मण्डूकपर्णी ·········प्रभृतीति। रक्तपित्तहराण्याहुर्हृयानि सुलघनि च। कुष्ठमेहज्वर श्वास-कासारुचिहराणि च। कषाया तु हिता पित्ते स्वादुदाकरसा हिमा लघ्वी मण्डूकपर्णी तु·······।" (सु० सं०———सू० ४६)

"ब्राह्मी हिमा सिरा तिक्ता लघुः मेध्या च शीतला।
कषाय मधुरा स्वादुपाकायुष्या रसायनी॥
स्वर्या स्मृतिप्रदा कुष्ठपाण्डुमेहास्रकासजित्।
विषशोथज्वरहरी तद्वन्मण्डूकपाणिनी॥" (भा० प्र०)

"मण्डूकपर्ण्याः स्वरसः प्रयोज्यः············। आयुः प्रदान्यादयनाशनानि बलाग्निवर्णस्वरवर्धनानि। मेध्यानि चेतानि रसायनानि·········।" (च० चि० १)

"हृतदोष एव प्रतिसंसृष्टयेक्तः यथाक्रममागारं प्रविश्य मण्डूकपर्णीस्वरसमादाय सहस्रसंपाताभिहुतं कृत्वा यथाबलं पयसा पिबेत्। एवं दशरात्रमुपयुज्य मेधावी वर्षशतायुः भवति।" (सु० चि० २८)। "रसो मण्डूकपर्ण्यास्तु प्रलेपात् पिटिकामयम्।··········प्रणाशयेत्"॥ (यो० तं०)

वात, तिक्त-कषाय-मधुर रस, मधुर विपाक एवं शीतवीर्य होने से पित्त तथा तिक्तरस एवं लघु गुण होने से कफ का शमन करती है। स्मरण शक्ति और मस्तिष्क की धारण शक्ति के बढ़ाने की यह प्रमुख औषधि है। रासायनिक संगठन की दृष्टि से इसमें "ब्राह्मीन" (Brahmin) नामक क्षारतत्व होता है। सूखी पत्तियों में ७८ प्रतिशत जल और कुछ उड़नशील तैल होता है। सूखी पत्तियों में १२ प्रतिशत भस्म मिलती है, जिसमें राल, वसामय सुगन्ध द्रव्य, निर्यास, शर्करा कषायद्रव्य, अलब्यूमिन (Albumin) और लवण होते हैं।

भारत के अतिरिक्त कुछ अन्य देशों में भी सरस्वती की उपस्थिति के संकेत मिलते हैं, जैसे मेक्सिको (Mexico) में ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव से मिलते जुलते देवताओं और उनकी शक्तियों की प्रतिमायें भी मिली हैं। वहाँ की भाषा में ब्रह्मा के समान देवता को Tezcathipoca और उनकी शक्ति सरस्वती के समान देवी को Cihuacoat या Tonacacihua कहते हैं[१]।

———

[१] चमन लाल—Hindu America, पृ० सं० २३७।

द्वितीय अध्याय

वैदिक—साहित्य में सरस्वती

ऋग्वेद में सरस्वती

चारों वेदों में ऋग्वेद सब से प्राचीन है। इससे हमारे पूर्वज आर्यों के रहन-सहन तथा धार्मिक आचार-विचार पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। आर्यों के देवता तीन श्रेणियों में विभक्त थे – दिव्य, अन्तरिक्ष और पार्थिव। पार्थिव देवताओं में अग्नि, सोम, पृथ्वी के साथ-साथ नदियां और पर्वत आदि भी सम्मिलित थे। इन्हीं नदियों के अन्तर्गत सरस्वती का भी नाम है।

वैदिक कर्मकाण्ड का प्रारम्भिक रूप ही भिन्न था। उस समय पुरुष देवों को अधिक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था और देवियों का स्थान अपेक्षाकृत निम्न था। फिर भी बहुत सी देवियाँ वैदिक ऋषियों की विचार-धारा में विशेष रूप से प्रतिष्ठित थीं। उन्होंने अदिति (देवमाता), उषस् (प्रातःकाल की देवी), पृथ्वी (पृथ्वी माता) और वाक् देवी (वाणी की देवी) को महत्वपूर्ण स्थान दिया था।

सरस्वती पहिले एक नदी के रूप में मानी गई हैं। इसी नदी के तट पर उच्चकोटि की वैदिक संस्कृति का विकास हुआ था। कालान्तर में इसे देवी का रूप मिला और फिर यह वाणी और ज्ञान की देवी के रूप में प्रचारित हुई।

यों तो ऋग्वेद में गंगा, यमुना, सिन्धु एवं उनकी सहायक नदियों की तथा उनकी प्रशंसा मिलती है, किन्तु इन सब की अपेक्षा सरस्वती की प्रशंसा अत्यधिक है। सरस्वती का मानवीकरण भी अन्य नदियों की अपेक्षा अधिक विकसित है। यद्यपि ऋग्वेद के अन्य देवों की भाँति इनकी कल्पना भी अत्यन्त पारदर्शी है और सरस्वती का सम्बन्ध नदी से विस्मृत नहीं किया गया है। जहाँ कहीं भी वर्णन और प्रशंसा मिलती है, वहाँ इनका नदी रूप ही समक्ष आता है। सरस्वती की प्रशस्ति में तीन सम्पूर्ण सूक्त और कुछ फुटकर मन्त्र हैं। नदी रूप का ज्ञान प्रथम मण्डल के तीसरे सूक्त के दसवें मन्त्र से होता है और इसके बारहवें मन्त्र से तो यह रूप पूर्णतः स्पष्ट है। यहाँ इन्हें जल-राशि और समस्त ज्ञान को उत्पन्न करने वाली कहा गया है। सरस्वती के ज्ञान देने वाली देवी के रूप की कल्पना, सम्भवतः, यहाँ से प्रारम्भ होती है। यद्यपि इस रूप का पूर्ण विकास बाद के युग में ही हुआ। ये दोनों मन्त्र इस प्रकार हैं :—

पावकानः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती।
यज्ञंवष्टु धियावसुः॥ (१–३–१०)

और

महो अर्णः सरस्वती प्रचेतयति केतुना।
धियो विश्वा विराजति॥ (१–३–१२)

नदी और ज्ञानदात्री के रूप में सरस्वती के दो स्वरूप प्रदर्शित होते हैं। एक भौतिक और दूसरा आध्यात्मिक अथवा दार्शनिक। यास्क ने भी इन दोनों स्वरूपों को स्वीकार किया है। भौतिक रूप में सरस्वती को एक सरोवर (झील) से निकला हुआ माना गया है। इसी प्रकार आध्यात्मिक अथवा दार्शनिक रूप में

सरस्वती को ब्रह्माण्ड के अमृत सरोवर से उत्पन्न माना जाता है। ब्रह्माण्ड के लिए 'योहि ब्रह्माण्डे सोऽपि पिण्डे' कहा गया है, अर्थात् जो विश्व में हैं, वही मानव शरीर में भी वर्तमान है। वेद के सरस्वती शब्द की व्याख्या विशद रूप से इस कारण की गई है कि इसके द्वारा मानव पिण्ड में सरस्वती की होने वाली क्रियाओं का विस्तृत ज्ञान प्राप्त हो सके। गोरख संहिता में भी कहा है कि मनुष्य के शरीर में ही सभी तीर्थ, सभी देवताओं तथा सभी विद्याओं का निवास है।[१] इस तर्क से यह स्पष्ट होता है कि देवी सरस्वती-ब्रह्मा की शक्ति-मानव शरीर में वर्तमान हैं। यह शक्ति वागोद्भव केन्द्र में आसीन है और इसी कारण वाक् और शब्द पर इसका नियंत्रण है, जिससे इन्हें वाग् अधिष्ठातृ देवी कहा जाता है।

कुछ पाश्चात्य विद्वानों का कथन है कि आर्य लोग सरस्वती के तट पर यज्ञ करते थे और इसलिए उन्होंने इसे बाद में वाक् प्रेरयित्री देवी मान लिया। जो विद्वान् आर्यों का मूल स्थान मध्य एशिया मानते हैं, उनका कथन है कि मार्ग में पड़ने वाली सरस्वती नदी का सुस्वादु जल पीकर आर्य उस पर मुग्ध हो गये और उन्होंने उसकी स्तुति की। साथ ही, कुछ भारतीय विद्वानों के अनुसार आर्य लोग संसार की सब विभूतियों को ईश्वर का स्वरूप मान कर उनका सम्मान करते थे, और इसी कारण उन्होंने अन्य नदियों सहित सरस्वती नदी को तथा पर्वत इत्यादि अनेक पार्थिव वस्तुओं को अत्यन्त पवित्र माना और उनकी प्रशंसा की।

ऋग्वेद में वर्णित सरस्वती का वर्गीकरण निम्नलिखित ढंग से हो सकता है:—

१—सरस्वती का नदी रूप

सरस्वती का नदी रूप तथा ज्ञान-दात्री रूप प्रथम मण्डल में ही स्पष्ट हो जाता है, जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य मंत्रों में भी सरस्वती का नदी रूप अत्यन्त स्पष्ट रूप से मिलता है। सिन्धु, सरयू आदि इक्कीस प्रकाण्ड नदियों, पर्वतों, वनस्पतियों, अग्नि, सोम, रुद्र तथा नक्षत्रों सहित सरस्वती की प्रशंसा की गई है और उनका यज्ञ में आवाहन किया गया है। इन नदियों से, जिनमें सरस्वती भी हैं, मधु के समान जल का दान मांगा गया है। इन महान् तरंग शालिनी नदियों से सुरक्षा की भिक्षा भी मांगी गई है और इन्हें जल को प्रेरित करने वाली भी कहा है:

"त्रिःसप्त सस्रा नद्यो महीरपो वनस्पतिन् पर्वतां अग्निमूतये।
कृशानुमस्तृन्तिष्यं सधस्थ आ रुद्रं रुद्रेषु रुद्रियं हवामहे॥
सरस्वती सरयुः सिन्धुरूर्मिभिर्महो महीरवसा यन्तु वक्षणीः।
देवी रापो मातरः सूदयित्नवो घृतवत् पयो मधुवन्नो अर्चत्॥" (१०–६४–८।९)

सरस्वती तथा गंगा यमुना और सिन्धु की सहायक नदियों से यज्ञ में अपना भाग ग्रहण करने की प्रार्थना की गई है।

"इमं मे गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्णया।
असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये श्रृणुह्या सुषोमया॥" (१०–७५–५)

सरस्वती नदी के प्रवाह के विषय में कथन है कि लौह दुर्ग के समान सरस्वती नदी धारक जल के सहित प्रवाहित होती है, पर्वतों से निकल कर दिव्य समुद्र तक जाती है और महानता में सभी नदियों से बढ़कर है

---

[१] देहस्थासर्वविद्याश्च देहस्थासर्वदेवता।
देहस्थासर्वतीर्थानि गुरु वा कं न लभते॥

तथा सभी नदियों से पवित्र है।[1] यह अपनी शक्तिशाली लहरों से पर्वत-शिखरों को तोड़ देती है और तब वेगवान जल गर्जन करता हुआ आगे बहता है।[2] सरस्वती का जल अपरिमित, अकुटिल, दीप्तिमान, अप्रतिहत, प्रचण्ड शब्द करने वाला है।[3]

सरस्वती नदी को महानों में महानतम और गतिशीलों में सर्वाधिक गतिशील कहा गया है। यह प्रार्थना भी की गई है कि वह अपने दुग्ध सदृश्य पवित्र जल को न रोके और साथ ही साथ अपने वेगवान जल से पीड़ित भी न करे।

"प्रया महिम्ना महिनासु चेकिते द्युम्नेभिरन्या अपसामपस्तमा।
रथ इव बृहती विभ्वने कृतोपस्तुत्या चिकितुषा सरस्वती ॥
सरस्वत्यभिनो नेषि वस्यो माप स्फरीः पयसा मा न आधक्।
जुषस्व नः सख्या वेश्या च मा त्वत्क्षेत्राण्यरणानि गन्म ॥ (६-६१-१३। १४)

यहाँ कवि इसलिए भी सरस्वती की स्तुति करता है कि कहीं वह इस पवित्र नदी से दूर किसी अपरिचित स्थान में न भेज दिया जाय अथवा दूसरे शब्दों में, वह सरस्वती से विनय पूर्वक कहता है कि उसका बन्धुत्व सरस्वती स्वीकार करें और उसे निकृष्ट स्थान पर निर्वासित न होने दें।

सरस्वती की सात बहिनें कही गई हैं[4]। इन्हें सप्तस्वरीय भी माना है[5]। सरस्वती को सात नदियों में से एक, नदियों की माता[6] और नदियों, माताओं तथा देवियों में सर्वश्रेष्ठ कहा गया है[7]।

---

[1] प्रक्षोदस्य धायसा सस्र एषा सरस्वती धरुण मायसी पूः।
प्रबाबधाना रथ्येव यातिविश्वा अपो महिना सिन्धुरन्याः ॥ (ऋ० वे० ७–९५–१)

[2] इयं शुष्मेभिर्बिसखा इवारुजत्सानु गिरीणां तविषेभिरूर्मिभिः।
पारावतघ्नीमवसे सुवृक्तिभिः सरस्वती मा विवासेम धीतिभिः ॥ (ऋ० वे० ६–६१–२)

[3] यस्या अनन्तो अह्रुतस्त्वेषश्चरिष्णुरर्णवः।
अमश्चरति रोरुवत् ॥ (ऋ० वे० ६–६१–८)

[4] उत ना प्रियासु सप्त स्वसा सुजुष्टा
सरस्वती स्तोम्या भूत्। (ऋ० वे० ६-६१-१०)

[5] त्रिषधस्था सप्तधातुः पंचजाता वर्धयन्ती।
वाजे-वाजे हव्या भूत ॥ (ऋ० वे० ६-६१-१२)

[6] आ यत् साकं यशसो वावशानाः सरस्वती सप्तथी सिन्धुमाता।
याः सुष्वयन्त सुदुघाः सुधारा अभिस्वेन पयसा पीप्यानाः ॥ (ऋ० वे० ७-३६-६)

[7] अम्बितमे नदीतमे देवितमे सरस्वति।
अप्रशस्ता इवस्मसि प्रशस्तिमम्ब नस्कृधि ॥
त्वे विश्वा सरस्वति श्रितायूंषि देव्याम्।
शुन होत्रषु मत्स्वप्रजां देवि दिदिड्ढिनः ॥
इमा ब्रह्म सरस्वति जुषस्व वाजिनीवति।
या ते मन्म गृत्समदा ऋतावरि प्रिया देवेषुजुह्वति ॥ (ऋ० वे० २-४१-१६।१७।१८)

कहीं-कहीं सरस्वती को पावीरवी कन्या भी कहा है, जैसेः—

पावीरवी कन्या चित्रायुः सरस्वती वीर पत्नी धियाधात् ।
ग्नाभिरच्छिद्रं शरणं सजोषा दुराधर्षं गृणतेशर्मयंसत् ॥　(ऋ० वे० ५-४९-७)

इस उपाधि का अर्थ सम्भवतः विद्युत की पुत्री है। इन्हें यहाँ एक वीर पत्नी भी कहा गया है।

यहाँ इस वीरपति से तात्पर्य संभवतः उस 'सरस्वान्' या "सरस्वन्त" से है, जिन्हें एक स्थान पर[१] नदी देवी सरस्वती की प्रशस्ति के बाद ही स्त्री, धन-संतान देने वाले और एक रक्षा करने वाले देवता के रूप में कहा गया है। यहाँ उनके उर्वरक जल और पयोधरों की भी चर्चा है। एक अन्य स्थल पर अग्नि को सरस्वन्त के रूप में वर्षा देने वाला कहा गया है। संभवतः सरस्वन्त नाम की कल्पना सरस्वती के आधार पर ही कर ली गई, ठीक उसी प्रकार जैसे ऋग्वेद के अन्य स्थलों में अग्नि वरुण आदि नामों पर इन देवों की पत्नियों की कल्पना की गई है[२]। कीथ की दृष्टि में रॉथ के इस मत का कि सरस्वन्त अकाशीय जलों के अध्यक्ष देव हैं, अथवा हिलेब्रेंट और हार्डी के, कि वे अपांनपात् ही हैं, कोई ठोस आधार नहीं[३]।

पावीरवी की उपाधि का प्रयोग तन्यतु के लिये भी हुआ है, जिसमें आयुधवाली माध्यमिका वाक् अज एकपात्, आकाशीय जल, विश्वदेव और सरस्वती को लक्ष किया गया है :

"पावीरवी तन्यतुरेक पादजो दिवो धर्ता सिन्धुरापः समुद्रियः ।
विश्वेदेवासः शृणवन् वचांसि मे सरस्वती सहधीभिः पुरन्ध्या ॥　(ऋ० वे० १०-६५-१३)

पावीरवी के अतिरिक्त इन्हें अनेक स्थलों पर "सुभगा" की भी उपाधि दी गई है, जैसे 'सरस्वती नः सुभगा मयस्करत्[४] उतस्या नः सरस्वती　सुभगा यज्ञे　[५], अयमु ते सरस्वती　सुभगे व्यावः[६], 'सरस्वती वा सुभगा[७]" इत्यादि।

सरस्वती को पार्थिव क्षेत्रों और विस्तृत अन्तरिक्षीय स्थानों को परिपूर्ण करने वाली, तीनों आवासों पर अधिकार रखने वाली, पृथ्वी और स्वर्ग के विस्तीर्ण प्रदेशों को दीप्तिमान करने वाली तथा निन्दकों से रक्षा करने वाली कहा है। "महान् पर्वत" अर्थात् अन्तरिक्ष से उतर कर यज्ञ-स्थल तक आने के लिए उनका आवाहन

---

[१] बृहदु गायिषे वचोसुर्या नदीनाम् ।
सरस्वतीमिन्महया सुवृक्तिभिः स्तोमैर्वसिष्ठ रोदसी ॥
उभे यत्ते महिना शुभ्रे अन्धसी अधिक्षियन्ति पूरवः ।
सा नो बोध्यवित्री मरुत्सखा चोद राधो मघोनाम् ॥
भद्रमिद्भद्रा कृणवत् सरस्वत्यकवारी चेतति वाजिनीवती ।
गृणाना जमदग्निवत् स्तुवाना च वसिष्ठवत् ॥　(ऋ० वे० ७-९६-१ से ३)

[२] ऋ०वे० ७-९६-१ से ३।

[३] The Religion and philosophy of the Veda and Upanishads by A. B. keith, p. 174.

[४] ऋ० वे० १-८९-३।　[५] ऋ० वे० ७-९५-४।

[६] ऋ० वे० ७-९५-६।　[७] ऋ० वे० ८-२१-१७।

किया गया है[१]। यहाँ हम उस कल्पना का प्रारम्भिक संकेत प्राप्त कर सकते हैं, जो महाकाव्यों-पुराणों में गंगावतरण की कथा में भारतीय धार्मिक इतिहास का एक सामान्य अंग बन चुकी थी[२]। इन्हें पितरों के साथ रथ पर बैठ कर यज्ञ-स्थल पर आने वाली और कुश के आसन पर विराजमान होने वाली तथा निरोग बनाने वाली भी कहा है[३]। एक स्थल पर इन्हें "असुर्या" भी कहा गया है।

कुछ ऋचाओं में सरस्वती नदी के तट पर रहने वाले राजाओं का भी उल्लेख है, जैसे :

"एका चेतत् सरस्वती नदीनां शुचिर्यती गिरिभ्य आसमुद्रात्।
रायश्चेतन्ती भुवनस्य भूरेर्घृतं पयोदुदुहेनाहुषाय" ॥" (ऋ० वे० ७-९५-२)

तथा

"चित्र इन्द्रजा राजका इदन्यकेयके सरस्वतीमनु।
पर्जन्य इव ततनद्धि वृष्टया सहस्रमयुता ददत् ॥ (ऋ० वे० ८-२१-१८)

२—नदी रूपी सरस्वती से धन समृद्धि की याचना

ऋग्वेद में सरस्वती की जहाँ भी प्रार्थना की गई है, लगभग सभी जगह उन्हें अत्यन्त दयामयी तथा जल, धन, धान्य और समृद्धि का दान करने वाली कहा गया है। प्रारम्भ से ही इन्हें, धनदात्री, अन्नदात्री, यज्ञ की कामनाओं को पूर्ण करने वाली माना गया था[४]। किन्तु कुछ मंत्र ऐसे भी हैं, जहाँ स्पष्ट रूप से सरस्वती को विलक्षण धन राशि और अन्न उत्पन्न करने वाली, धन, समृद्धि और पोषण प्रदान करने वाली; निरोग बनाने वाली तथा अन्न दान करने वाली इत्यादि कहा गया है। उदाहरणार्थ :

"सरस्वतीं यां पितरो हवन्ते दक्षिणा यज्ञमभिनक्षमाणाः।
सहस्रार्घमिळो अत्र भागं रायस्पोषं यजमानेषु धेहि ॥" (ऋ० वे० १०-१७-९)

एक स्थान पर इनके जल की तुलना घृत और मधु से की गई है।

"सरस्वती सरयूः सिन्धुरूर्मिभिर्महो महीरवसा यन्तु वक्षणीः।
देवीरापो मातरः सूदयित्न्वो घृतवत् पयो मधुमन्नो अर्चत ॥ (ऋ० वे० १०-६४-९)

इन्हीं कारणों से अनेक स्थानों पर इनसे प्रार्थना की गई है कि ये हमें अधिक धन दें, हमें दीन न करें, हमारा रक्षण करें, हम दरिद्र हैं, इसलिए हमें धन का दान दें, इत्यादि। इस सम्बन्ध में कुछ मंत्र विशेष उल्लेखनीय हैं, जैसे :

---

[१] आ नो दिवो बृहतः पर्वतादा सरस्वती यजता गन्तु यज्ञम्।
हवं देवी जुजुषाणा घृताची शग्मां नो वाचमुशती शृणोतु ॥ (ऋ० वे० ५-४३-११)

[२] The Religion and and philosophy of the Veda and Upanishads by A. B. Keith, p. 173.

[३] सरस्वति या सरथं ययाथ स्वधाभिर्देवि पितृभिर्मदन्ती।
आसद्यास्मिन्बर्हिषि मादयस्वानमीवा इष आ धेह्यस्मे ॥ (ऋ० वे० १०-१७-८)

[४] ऋ० वे० ६-९६-१।

[५] ऋ० वे० १-३-१०।

"सरस्वत्यभि नो नेषि वस्यो माप स्फरीः पयसा मा न आ धक् ।
जुषस्व नः सख्या वेश्या च मा त्वत्क्षेत्राण्यरणानि गन्म ॥ (ऋ० वे० ६-६१-१४)

इसके अतिरिक्त इस बात का भी उल्लेख मिलता है कि देवी सरस्वती की आराधना से धन-धान्य की प्राप्ति होती है। नहुष को प्रचुर धन-धान्य देने का स्पष्ट उल्लेख है[1]। यह भी कहा गया है कि वेद रस रूप सार का पठन करने वाले ब्राह्मणों को सब प्रकार की विभूतियों का दान प्राप्त होता है[2] तथा देवी सरस्वती अपने स्तोताओं के लिए दान शालिनी, अन्नयुक्ता, रक्षिका और अन्न द्वारा तृप्ति प्रदान करनेवाली हैं[3]।

३—गर्भ का रक्षण करने वाली तथा सन्तान दात्री देवी

ऋग्वेद के कुछ मंत्रों में सरस्वती का प्रजनन में सहायिका तथा सन्तान दात्री देवी का रूप प्रस्तुत होता है। एक स्थल पर उल्लेख है कि इन्हीं सरस्वती देवी की सहायता से वध्र्यश्व नामक राजा अथवा हव्यदाता ने दिवोदास नामक पुत्र प्राप्त किया था :

"इयमददाद्रभसमृणच्युतं दिवोदासं वध्र्यश्वाय दाशुषे ।
या शश्वन्तमाचखादावसं पणिं ता ते दात्राणि तविषा सरस्वति ॥" (ऋ० वे० ६-६१-१)

इसी तरह सरस्वती को सन्तान की रक्षा करने वाली तथा सन्तान प्रदान करने वाली कहा गया है :

"गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि सरस्वति ।
गर्भं ते अश्विनौ देवावा धत्तां पुष्करस्रजा ॥" (ऋ० वे० १०-१८४-२)

एक स्थान पर तो सरस्वती के जल को भी सन्तान का रक्षण करने वाला बताया गया है।

आपो रेवतीः क्षयथा हि वस्वः क्रतुं च भद्रं बिभृथामृतंच ।
रायश्च स्थः स्वपत्यस्य पत्नीः सरस्वती तद्गृणते वयो धात् ॥
(ऋ० वे० १०-३०-१२)

४—वृत्र तथा देवताओं के शत्रुओं का हनन करने वाली

ऋग्वेद के कुछ मंत्रों में सरस्वती, अत्यन्त भयंकर वृत्र का वध करने वाली, देवद्रोहियों का विनाश करने वाली तथा भक्तों की रक्षा करनेवाली भी प्रदर्शित की गई हैं। वृत्र का वध हिरण्यमय रथ पर आरूढ़ सरस्वती द्वारा हुआ था—ऐसा भी उल्लेख है :

"उत स्या नः सरस्वती घोरा हिरण्यवर्तनिः ।
वृत्रघ्नीवष्टि सुष्टुतिम् ॥ (ऋ० वे० ६-६१-७)

यहीं पर यह भी उल्लेख है कि सरस्वती ने देवताओं के निन्दकों का वध किया है और सर्वव्यापी वृत्र त्वष्टा के पुत्र का संहार किया है :

---

[1] ऋ० वे० ७-९५-२ ।

[2] "पावमानीर्यो अध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम् ।
तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिर्मधूदकम् ॥" (ऋ० वे० ९-६७-३२)

[3] "प्र णोदेवी सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती । धीनामवित्र्यवतु ॥" (ऋ० वे० ६-६१-४)

"सरस्वती देव निदो नि बर्हय प्रजां विश्वस्य बृसयस्य मायिनः ।
उतक्षितिभ्यो वनीरविन्दो विषमेभ्यो अस्रवो वाजिनीवति ॥" (ऋ० वे० ६-६१-३)

इसका दूसरा अर्थ यह भी हो सकता है कि सरस्वती की सहायता से इन्द्र ने ये कार्य किये हैं। यही कारण है कि युद्ध में भी सरस्वती आवाहन करने योग्य कही जाती हैं।

५—विभिन्न देवताओं के साथ सम्बन्ध

ऋग्वेद की सामान्य प्रवृत्ति के अनुरूप देवी सरस्वती का भी बहुधा अन्य देवताओं के साथ आवाहन मिलता है, जैसे पूषन्, इन्द्र, मरुत्, सोम, आपः इत्यादि। यहां हम विशेष रूप से इन्द्र, मरुत्गण और आश्विनदेवों से उनके सम्बन्ध का उल्लेख कर सकते हैं।

(क) इन्द्र के साथ

सरस्वती के "पावीरवी-कन्या" के रूप का उल्लेख पहिले किया जा चुका है, जिसका अर्थ सम्भवतः "विद्युत की पुत्री" है। बाद के साहित्य में (ब्राह्मणों में) "पावीरवी" उपाधि इन्द्र के लिए प्रयुक्त हुई है। जिससे निष्कर्ष निकलता है कि ये इन्द्र की पुत्री हैं। इसके अतिरिक्त अन्य कई जगह भी सरस्वती और इन्द्र का साथ-साथ आवाहन हुआ है। जैसे :

"इन्द्रो नेदिष्ठमवसागमिष्ठः सरस्वती सिन्धुभिः पिन्वमाना।
पर्जन्यो न ओषधीभिर्मयोभुरग्निः सुशंसः सुहवः पितेव ॥" (ऋ० वे० ६-५२-६)
आग्ने गिरोदिव आ पृथिव्या मित्रं वह वरुणमिन्द्रमग्निम्।
आर्यं मणमदितिं विष्णुमेषां सरस्वती मरुतो मादयन्ताम् ॥ (ऋ० वे० ७-३९-५)

सरस्वती का उग्र, संहारक, वृत्रघ्न रूप भी, जिसकी ऊपर चर्चा की गई है, उनके इन्द्र से सम्बन्ध का द्योतक हो सकता है।

(ख) मरुद्गणों के साथ

सरस्वती को मरुतों के साथ विशेष रूप से सम्बन्धित किया गया है। ऋग्वेद में इस विषय पर कई प्रसंग मिलते हैं। इस स्थल पर कहा गया है कि मरुद्गण व सरस्वती द्युतिमान् रथ वाले हैं, आयुधवान् तथा दीप्तिमान् हैं, शत्रुओं का विनाश करने वाले हैं। दोनों से धन और पुत्र की याचना की गई है :

"विद्युद्रथा मरुत ऋष्टिमन्तो दिवो मर्या ऋत जाता अयासः।
सरस्वती शृणवन् यज्ञियासो धाता रयिं सहवीरं तुरासः ॥" (ऋ० वे० ३।५४।१३)

एक अन्य मन्त्र में मनुष्यों का संदेश देवताओं तक ले जाने वाले अग्नि से कहा गया है कि वे जल तथा समृद्धिदान के लिए सरस्वती तथा मरुत् आदि देवों का यज्ञ करते रहें :

अग्ने याहि दूत्यं मा रिषण्यो देवां अच्छा ब्रह्म कृता गणेन।
सरस्वतीं मरुतो अश्विनापो यक्षि देवान्रत्नधेयाय विश्वान् ॥ (ऋ० वे० ७-९-५)

अन्यत्र अग्नि से यह भी कहा गया है कि वे वरुण, इन्द्र, अर्यमा, अदिति और विष्णु को यज्ञ में बुलावें तथा सरस्वती और मरुत प्रसन्न हों[1]। एक स्थल पर कहा गया है कि मरुतों का पृषत् नामक अश्व है तथा

[1] ऋ० वे० ७-३९-५।

मरुतों द्वारा संरक्षित मनुष्य बड़े बलवान और ओजस्वी हैं और अग्नि एवं मरुतों सहित सरस्वती उनकी रक्षा करती हैं :

सेदुग्रो अस्तु मरुतः स शुष्मी यं मर्त्यं पृषदश्वा अवाथ ।
उतेमग्निः सरस्वती जुनन्ति न तस्य रायः पर्येतास्ति ॥ (ऋ० वे० ७-४०-३)

सरस्वती को मरुतों का साथी अथवा मित्र भी कहा गया है। यह भी उल्लिखित है कि सरस्वती मरुतों के साथ होकर दृढ़तापूर्वक शत्रुओं पर विजय प्राप्त करें।

सरस्वति त्वमस्मां अविड्ढि मरुत्वती धृषती जेषि शत्रून् ।
त्यं चिच्छर्धन्तं तविषीयमाणमिन्द्रो हन्ति वृषभं शण्डिकानाम् ॥ (ऋ० वे० २-३०-८)

(ग) अश्विनों के साथ

ऋग्वेद में एक स्थल पर सरस्वती को अश्विनों के साथ भी सम्बद्ध किया गया। एक बार जब अश्विनों नें सोमरस पान करके अपनी क्षमता और अद्‌भुत कार्यों द्वारा इन्द्र की सहायता उसी प्रकार की थी, जिस प्रकार कि माता और पिता अपने पुत्र की रक्षा करते हैं, तब सरस्वती ने आश्विनों का श्रम मिटाया था :

पुत्रमिव पितरावश्विनोभेन्द्रावथुः काव्यैर्दं सनाभिः ।
यत् सुरामं व्यपिबः शचीभिः सरस्वती त्वा मघवन्नभिष्णक् ॥ (ऋ० वे० १०-१३१-५)

इस पुरा-कथा के संदर्भ में वाजसनेयि संहिता में यह कहा गया है कि देवताओं ने जब एक उपशामक यज्ञ सम्पूर्ण किया था, तब चिकित्सा करने वालों के रूप में अश्विनिद्वय ने और अपनी मृदुवाणी द्वारा देवी सरस्वती ने इन्द्र के अन्दर शक्ति का संचार किया था[१]।

यह अनुमान किया जा सकता है कि सरस्वती का अश्विनों से अपेक्षाकृत अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध था[२]। सम्भवतः इसी के फलस्वरूप वाजसनेयि संहिता में सरस्वती को अश्विनों की पत्नी कहा गया है[3]।

(घ) दो सहदेवियों (इला और भारती अथवा मही) के साथ

ऋग्वेद के पशु-यज्ञों के आप्री सूक्तों में देवी सरस्वती का आवाहन दो अन्य देवियों—इला और भारती (अथवा मही)—के साथ किया गया है। एक मन्त्र में कहा गया है कि अग्नि-रूपा सरस्वती, इला और सर्व व्यापिका भारती यज्ञ में सम्मिलित हों और यज्ञ के भाग को ग्रहण करें।

सरस्वती साधयन्ती धियं न इला देवी भारती विश्वतूर्तीः ।
तिस्रो देवीः स्वधया बर्हिरेदमच्छिद्रं पान्तु शरणं निषद्य ॥ (ऋ० वे० २-३-८)

दूसरे मन्त्र में कहा गया है कि अग्नि-रूपा भारती अपने सम्बन्धियों सहित, इला देवों और मनुष्यों के साथ और सरस्वती सारस्वत गणों के साथ आवें और आकर तीनों देवियां कुशासन पर विराजें।

आ भारती भारतीभिः सजोषा इला देवैर्मनुष्येभिरग्निः ।
सरस्वती सारस्वतेभिरर्वाक् तिस्रो देवीर्बर्हिरेदं सदन्तु ॥ (ऋ० वे० ३-४-८)

---

[१] वा० सं० १९।१२।९४

[२] The Religion & Philosophy of the Veda and Upanishads by A. B. Keith, P. 173.

[3] वा० सं० १९।१४

एक स्थल पर प्रार्थना की गई है कि अग्निरूपिणी भारती, इला और सरस्वती आवें।[१] साथ ही साथ उनके द्वारा सम्पत्तिशाली होने की भिक्षा भी मांगी गई है। भारती सरस्वती और इला नामक तीन सुन्दर देवियों का सोम यज्ञ में आवाहन किया गया है[२] और यह प्रार्थना की गई है कि भारती (सूर्य दीप्ति) इला और सरस्वती मनुष्यों के समान आवें।[३] ये तीनों देवियाँ चमत्कार करने वाली कही गयी हैं। अतः उनसे यज्ञ में पधार कर सुखद आसन ग्रहण करने की प्रार्थना की गई है।

किन्हीं-किन्हीं स्थलों पर सरस्वती के साथ भारती और इला को सम्बन्धित न करके 'मही' और 'होत्रा' नाम की देवियों को सम्बन्धित किया है, जैसे :

इडा सरस्वती मही तिस्रो देवीर्म्मयोभुवः।
बर्हिः सीदन्त्वस्रिधः॥ (ऋ० वे० १–१३–९)

कीथ के अनुसार इला की कल्पना यज्ञ में दी जाने वाली हवि के आधार पर ही की गई है, और मही तथा होत्रा भी इसी प्रकार की देवियाँ मालूम पड़ती हैं। पर भारती की कल्पना का आधार आर्यों का भरत-कुल मालूम पड़ता है और यह सरस्वती के समीकरण की ओर भी महत्वपूर्ण संकेत करता है।[४]

ऋग्वेद में इनके अतिरिक्त सरस्वती की प्रशस्ति में अन्य फुटकर मंत्र भी हैं, जिनसे उपर्युक्त सभी वर्गों का मिला-जुला रूप देखने में आता है।

६—सरस्वती-समीकरण

यह देखा जा चुका है कि साधारणतया ऋग्वेद में सरस्वती का नदी रूप ही सामने आता है। इसमें शंका नहीं की जा सकती कि सरस्वती नदी के आधार पर ही तन्नाम देवी की कल्पना विकसित हुई। इस नदी का महत्व बढ़ा, क्योंकि इसके तट पर आर्य-जातियों का निवास था और यहाँ वे अपने धार्मिक-कृत्य सम्पन्न करते थे। सरस्वती और दृषद्वती नदी के तट पर अग्नि प्रज्वलित किये जाने का संदर्भ मिलता है।[५]

वैदिक काल के बाद के सूत्र साहित्य तक में इस बात के उल्लेख हैं कि सरस्वती नदी के तट पर सम्पन्न यज्ञ को विशेष रूप से महत्वपूर्ण माना जाता था।[६] दृषद्वती नदी संभवतः राजपूताने की सिकता में विनष्ट

---

[१] भारतीळे सरस्वति या वः सर्वा उपब्रुवे।
ता नश्चोदयतः श्रिये॥ (ऋ० वे० १–१८८–८)

[२] भारती पवमानस्य सरस्वतीळा मही।
इमं नो यज्ञमा गमन् तिस्रोदेवीः सुपेशसः॥ (ऋ० वे० ९–५–८)

[३] आ नो यज्ञं भारती तूयमेत्विळा मनुष्वदिह चेतयन्ती।
तिस्रो देवीर्बर्हिरेदं स्योनं सरस्वती स्वपसः सदन्तु॥ (ऋ० वे० १०–११०–८)

[४] The Religion and Philosophy of the Veda and Upanishads by A. B. Keith, p. 173.

[५] नित्वा दधे वर आपृथिव्या इडायास्पदे सुदिनत्वे अह्नाम्।
दृषद्वत्यां मानुष आपयायां सरस्वत्यां रेवदग्ने दिदीह॥ (ऋ० वे० ३–२३–४)

[६] कात्यायन श्रौ० सू० १२. ३, २०; २४. ६, २२; लाट्यायन श्रौ० सू० १०. १५, १; १८, १३; १९, ४; आश्वलायन श्रौ० सू० १२. ६, २. ३; शांखायन श्रौ० सू० १३।२९।

घग्घर नदी थी और सरस्वती संभवतः कुरुक्षेत्रीय नदी थी। ऐतरेय ब्राह्मण[1] में भी सरस्वती के किनारे ऋषियों द्वारा किये गये एक यज्ञ का उल्लेख है, जिससे ज्ञात होता है कि सरस्वती के तट पर ही "भरतों" के यज्ञ स्थल थे, जिससे यज्ञों में होने वाली "आप्री" स्तुति में भारतों के मूर्तरूप हवि अर्थात् भारती को भी सरस्वती के साथ, स्वाभाविक रूप से, निश्चित स्थान प्राप्त हो गया।

कुछ लोगों ने सरस्वती नदी का समीकरण अफगानिस्तान की (आवेस्ता में वर्णित) हरक्वैति नदी से किया है, परन्तु साथ ही कुछ पाश्चात्य विद्वानों (जैसे रॉथ, ग्रासमैन, लुडविक, त्सिमर) का विचार है कि ऋग्वेद में सामान्यतः सरस्वती एक बड़ी नदी (सम्भवतः सिन्धु नदी) है, जिसका पवित्र नाम "सरस्वती" और लौकिक नाम सिन्धु था।

कुछ लोग मध्य भारत की एक छोटी नदी का समीकरण सरस्वती नदी से करते हैं। मैक्समूलर इसे इसी छोटी सी सरस्वती नदी के समान मानते हैं, जो दृषद्वती के साथ मिलकर ब्रह्मावर्त के क्षेत्र की पवित्र सीमा निर्धारित करती थी और जो आजकल तो मरुभूमि की वालुका में लुप्त हो गई है, पर वैदिक काल में समुद्र तक जाती थी।

ओल्डम का कथन है कि प्राचीन नदी-घाटियों के पर्यवेक्षण से ज्ञात होता है कि सरस्वती प्राचीन काल में शुतुद्री (आधुनिक–'सतलज') की एक छोटी सहायक नदी थी और जब शुतुद्री ने कालान्तर में अपना मार्ग बदला और विपाशा से मिल गई तब शुतुद्री की ही प्राचीन घाटी से होकर बहने लगी।

उत्तर-वैदिक कालीन साहित्य में सरस्वती

साधारणतः ऋग्वेद में सरस्वती नदी रूप में ही वर्णित हैं, पर उत्तर-वैदिक काल में इन्हें उत्तरोत्तर वाणी की देवी के रूप में माना जाने लगा था। वैदिक काल के बाद के साहित्य में तो ये भलीभाँति वाक्शक्ति और ज्ञान की देवी के रूप में प्रतिष्ठित और लोकप्रिय हो गईं और इन्हें ब्रह्मा की पत्नी भी माना गया। ऋग्वेद के पहले मण्डल के तीसरे सूक्त के बारहवें मंत्र की हम ऊपर चर्चा कर चुके हैं, जिसमें सरस्वती को समस्त ज्ञान को उत्पन्न करने वाली कहा गया है।[2] पर विभिन्न कारणों से आधुनिक विद्वान् ऋग्वेद के पहले और दशवें मंडल के सूक्तों को अपेक्षाकृत बाद का मानते हैं। यह स्वाभाविक भी है कि ज्ञान से सम्बद्ध इस देवी का यह रूप पवित्र नदी सरस्वती के देवी रूप में क्रमिक विकास की ही एक अवस्था है। आधुनिक विद्वानों की दृष्टि में इसका संभावित कारण यह हो सकता है कि वैदिक संस्कृति और विशेष रूप से वैदिक मंत्रों का विकास इस नदी के तट पर ही हुआ।[3] यजुर्वेद का यह संदर्भ भी कि रुग्ण के अन्दर सरस्वती ने अपनी मृदुवाणी से शक्ति का संचार किया,[4] इस विकास की प्रारंभिक अवस्था ही बताता है, क्योंकि अभी यहाँ भी वाणी सरस्वती की एक शक्ति मात्र हैं, उनका वास्तविक रूप नहीं। यजुर्वेद में अन्य स्थलों पर भी इन्हें वाक् सम्बन्धी देवी कह कर संबोधित किया गया है।[5] अथर्ववेद में भी इस प्रकार के संकेत हैं।[6]

---

[1] ऐ० ब्रा० २–३–१९।

[2] देखिए, पीछे

[3] The Religion and Philosophy of the Veda & Upanishads by A. B. Keith, p. 173-174.

[4] देखिए, पीछे, पृ० १८

[5] देखिए, आगे, पृ० १८

[6] देखिए, आगे, पृ० १९-२०

ब्राह्मण ग्रन्थों में, जैसे शतपथ[१] ब्राह्मण और ऐतरेय[२] ब्राह्मण में स्पष्ट रूप से सरस्वती का समीकरण "वाक्" से किया गया है। यहाँ यह ध्यान देने की बात है कि ऋग्वेद में ही वर्णित देवियों में एक देवी "वाक्" है, जिन्हें मूर्तरूप में वाणी भी कहा जा सकता है। यहाँ देवी स्वयं अपना वर्णन करती हुई कहती हैं कि वे सभी देवी-देवताओं के साथ रहती हैं और मित्र, वरुण, इन्द्र तथा अश्विनों को धारण करती हैं। नास्तिकों के प्रति ये रुद्र के धनुष को प्रेरित करती हैं, समुद्र, जल आदि सभी में इनका निवास रहता है और ये सभी प्राणियों को आवृत्त किये हुए हैं[३]। अन्यत्र यह भी कहा है कि यह "वाक्" देवी देवों की रानी हैं और दिव्य हैं[४]। नैघण्टुक में अन्तरिक्ष स्थान के देवों के अन्तर्गत वाक् की गणना है[५] और भाष्यकारों की शब्दावली में माध्यमिका वाक् (मध्यम स्थान की वाणी) ने ही सम्भवतः वाणी के मूर्तिकरण का मूल स्रोत प्रदान किया हो[६]। ब्राह्मणों में वाक् सम्बन्धी आख्यान के अनुसार गन्धर्वों से सोम वापस लाने के लिए वाक् को स्त्री रूप धारण करने का मूल्य चुकाना पड़ा था[७]। सम्भवतः उत्तर वैदिक काल में क्रमशः सरस्वती का, जिनका स्वतन्त्ररूप से ज्ञानदात्री देवी के रूप में भी विकास हो रहा था, "वाक्" से समीकरण किया जाने लगा, और धीरे-धीरे सरस्वती वाग्देवी और ज्ञान की देवी बन गयीं।

उत्तर वैदिक कालीन संहिताओं और ब्राह्मण-साहित्य में विभिन्न स्थलों पर सरस्वती की चर्चा है। सामवेद से कोई उल्लेखनीय सूचना नहीं प्राप्त होती, क्योंकि इसके अधिकांश मन्त्र ऋग्वेद से ही लिए हुए हैं। यजुर्वेद तथा अथर्ववेद से अपेक्षाकृत अधिक सूचना प्राप्त होती है, जिसका नीचे उल्लेख किया जा रहा है। ब्राह्मण साहित्य में सामान्यतया सरस्वती को वाक् शक्ति की देवी के रूप में ही माना गया है।

यजुर्वेद में सरस्वती

यजुर्वेद में सरस्वती का उतना निखरा हुआ वर्णन नहीं मिलता, जितना ऋग्वेद में, फिर भी अनेक स्थानों पर इनका उल्लेख है। यहाँ इनका नदी और देवी दोनों ही रूप लक्षित होता है और विभिन्न देवताओं के साथ इनका आवाहन है।

१—नदी रूप

इन्हें सप्त नदियों में से एक माना गया है[८]। कहीं-कहीं पूजन के पहिले सरस्वती नदी के जल से आचमन करने का भी उल्लेख मिलता है[९]।

२—सुख, समृद्धि तथा सन्तान दात्री के रूप में

कई स्थलों पर सरस्वती से प्रार्थना की गई है कि वे अपने अक्षय पयोधरों द्वारा धन-धान्य से समृद्धिशाली बनावें तथा शक्ति और सन्तान प्रदान करें[१०]। सरस्वती की सहदेवी इला को ही सम्भवतः "इडा" सम्बो-

---

[१] श० ब्रा० ३-९-१—७। [२] ऐ० ब्रा० ३-९-१०।

[३] ऋ० वे० १०-१२५- १ से ८ (सम्पूर्ण सूक्त व उसके साधारण अर्थ परिशिष्ट ३ में)

[४] ऋ० वे० ८-८९-१० व ११ (मैकडोनेल)।

[५] नै० ५-५। [६] नि० ११-२७। २

[७] ऐ० ब्रा० १-५-२७।

[८] और [९] य० वे० (ग्रिफिथ) पृ० ७९

[१०] ,, ,, पृ० ११९

धित कर एक अन्य स्थल पर कहा है कि इडा नामक धेनु यज्ञ में सहायिका हो[१]। अन्यत्र सरस्वती को गौ रूप में सम्बोधित करते हुए उनको अथाह धन-धान्य देने वाली कहा है[२]।

३—विभिन्न देवों के साथ प्रशस्ति और आवाहन

यजुर्वेद में सरस्वती को अश्विन की पत्नी कहा गया है[३]। सोम-यज्ञ में इनका आवाहन पूषन के साथ किया गया है[४]। राजसूय-यज्ञ सम्बन्धी मन्त्रों में अश्विन, सरस्वती तथा इन्द्र का साथ ही साथ उल्लेख मिलता है[५]। एक स्थान पर जीवन दान के लिए, इला व भारती के साथ सरस्वती का आवाहन किया गया है[६]। इन्द्र के चिकित्सक के रूप में भी हम इन्हें देख चुके हैं[७]।

४—अन्य रूपों में प्रशस्ति व आवाहन

कहीं-कहीं सरस्वती को वाक् सम्बन्धी देवी कहकर सम्बोधित किया है और अत्यधिक सोमपान के दुरुपयोग को दूर करने के लिए इनका आवाहन किया गया है[८]। अश्वमेध-यज्ञ के सम्बन्ध में इन्हें पवित्र करने वाली सरस्वती, महान् सरस्वती तथा देवी सरस्वती का सम्बोधन दिया है[९]।

अथर्ववेद में सरस्वती

अथर्ववेद में भी सरस्वती की प्रशंसा "नदी" और "देवी" दोनों रूपों में की गई हैं। सरस्वती को स्वर्गीय देवी, जल की अधिष्ठात्रीदेवी, उर्वरा शक्ति की प्रेरिका इत्यादि सम्बोधन के अतिरिक्त इनके वाक् शक्ति से समीकरण के भी संकेत मिलते हैं। सरस्वती को वाक् की अधिष्ठात्री कहा गया है[१०] और इनका आवाहन वाक् शक्ति को बुलाने के लिए किया गया है [११]तथा विभिन्न खण्डों में राज्य करने वाले देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के लिए सरस्वती की आराधना की गई है कि वे यज्ञ करने तथा पूजन करने वाले को शक्ति दें ताकि वह सभी देवों को संतुष्ट कर सके।

१	य० वे०	(ग्रिफिथ)	पृ० ६६
२	"	"	" २९७
३	"	"	" १८५
४	"	"	" २७
५	"	"	" ८६
६	"	"	" १९७
७	"	"	" १९९
८	"	"	" १६६ और १७२
९	"	"	" २०८

१० अर्यमणं बृहस्पतिमिन्द्रं दानाय चोदय। वातं विष्णुं सरस्वतीं सवितारं च वाजिनम्॥
(अथर्व० वे० ३-२०-७)

११ बृहता मन उपह्वये मातरिश्वना प्राणापानौ।
सूर्याच्चक्षुरन्तरिक्षाच्छ्रोत्रं पृथिव्याः शरीरम्॥
सरस्वत्या वाचमुप ह्वयामहे मनोयुजा॥ (अ० वे० ५-१०-८)

अथर्ववेद में सरस्वती की आराधना तथा उनका आवाहन और भी बहुत से कार्यों के लिए किया गया है, जैसे :—

१—रक्षा, समृद्धि तथा धन और सन्तान के लिए

ऋग्वेद की तरह अथर्ववेद में भी सरस्वती का आवाहन, सुरक्षा, धन, समृद्धि, सन्तान आदि के लिए कई स्थलों पर किया गया है। इन्हें रक्षा करने वाली[१] और हव्य पदार्थों की वृद्धि करने वाली कहा गया है[२]। सरस्वती से यह प्रार्थना की गई है कि वे स्तुति करने वाले की रक्षा करें और उसे दीर्घायु प्रदान करें[३]। आयु सम्बन्धी आशीर्वाद की याचना भी की गई है। एक अन्य स्थल पर भी सरस्वती से दीर्घायु तथा विजय प्राप्ति की कामना की गई है और यह भी प्रार्थना की गई है कि वे पृथ्वी पर रहने वालों से स्तोता की रक्षा करें[४]। कुछ मंत्रों में सरस्वती से सन्तान और समृद्धि की याचना करते समय यह भी प्रार्थना की गई है कि वे हव्य पदार्थों को स्वीकार कर सन्तान दें, समृद्धि प्रदान करें और उसका विस्मरण न करें[५]। सरस्वती के समृद्धि दान करने के सम्बन्ध में अन्य मन्त्र भी हैं[६]। एक स्थल पर प्रार्थना करते हुए कहा गया है कि जिस प्रकार वनों में वृक्ष बढ़ते हैं, उसी प्रकार सरस्वती धन-धान्य की वृद्धि करें और सिनीवाली हमारे लिए धन समृद्धि तथा सुख ले आवें।

एक स्थल पर कुछ अन्य देवताओं (अग्नि, इन्द्र, पृथ्वी) के साथ सरस्वती का आवाहन राजा और प्रजा के बीच का असन्तोष दूर करने के लिए किया गया है[७]। सरस्वती की प्रशस्ति के कुछ मंत्र विवाह

---

[१] पातां नो द्यावा पृथिवी अभिष्टये पातु ग्रावा पातु सोमो नो अंहसः।
पातु नो देवी सुभगा सरस्वती पात्वग्निः शिवा ये अस्य पायवः॥ (अ० वे० ६-३-२)

[२] देवा इमं मधुना संयुतं यवं सरस्वत्यामधि
मणावचर्कृषुः। इन्द्र आसीत् सीरपतिः
शतक्रतुः कीनाशा आसन् मरुतः सुदानवः॥ (अ० वे० ६-३०-१)

[३] आपानाय व्यानाय प्राणाय भूरिधायसे।
सरस्वत्या उरुव्यचे विधेम हविषा वयम्॥ (अ० वे० ६-४१-२)

[४] अ० वे० १९-४-४।

[५] सरस्वति व्रतेषु ते दिव्येषु देवि धामसु।
जुषस्व हव्यमाहुतं प्रजां देवि ररास्व नः॥
इदं ते हव्यं घृतवत् सरस्वतीदं पितृणां हविरास्यं यत्।
इमानि त उदिता शंतमानि तेभिर्वयं मधुमन्तः स्याम॥
शिवा नः शंतमा भव सुमृडीका सरस्वति।
मा ते युयोम संदृशः॥ (अ० वे० ७-६८-१।२।३)

नोट :—वैतान-सूत्र के अनुसार यह सम्पूर्ण सूक्त विश्वेदेव और पूर्ण चन्द्र को बलि देने के अवसर पर प्रयुक्त होता था। कौशिक-सूत्र के अनुसार इसका प्रयोग मृतक के अन्तिम संस्कार के अवसर पर होता था।

[६] अ० वे० १९-३१-९।१०।

[७] ओते मे द्यावा पृथिवी ओता देवी सरस्वती।
ओतौ म इन्द्रश्चाग्निश्चर्ध्यास्मेदं सरस्वति॥ (अ० वे० ६-९४-३)

सम्बन्धी सूक्तों में भी हैं, जिसमें सरस्वती से सन्तान और सुख की याचना की गई है तथा जल को सरस्वती का प्रतीक मान कर और उसी रूप में सम्बोधित करके सरस्वती को साक्षी बनाया गया है[१]।

२—शारीरिक व्याधियों और बाधाओं के नाश के लिए

अथर्ववेद में विभिन्न बाधाओं को नष्ट करने के लिए अनेक मंत्रों का विधान है। शारीरिक व्यथाओं को मिटाने के लिए भी सरस्वती का आवाहन किया गया है। इस प्रकार का एक सम्पूर्ण सूक्त ही सरस्वती की प्रशस्ति में है[२]। यद्यपि यह स्पष्ट नहीं होता कि किस व्याधि को दूर करने के लिए यह सूक्त लिखा गया है, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि यह बालकों को दांत निकलने के कष्ट से मुक्ति दिलाने के लिए है। इसी प्रकार एक अन्य सूक्त संभवतः मृतक संस्कार, बलि तथा मृतक आत्माओं की शान्ति के लिए प्रयुक्त हुआ है[३]। इसमें उल्लेख है कि हम पवित्र नदी सरस्वती की आराधना करते हैं, बलिदान के पहिले उनको पूजा करते हैं। पवित्र आत्मायें सरस्वती का आवाहन करते हैं कि वे आकार वरदान दें। देवता लोग, जो यज्ञ में आकर अपना भाग ग्रहण करते हैं, सरस्वती की आराधना करते हैं ताकि भोजन के हेतु पौष्टिक पदार्थ प्राप्त हों और कोई रोग आदि व्याप्त न हो, क्योंकि सरस्वती का आवाहन यज्ञ करने वालों को धन-धान्य से परिपूर्ण रखता है और रोगों से मुक्ति प्रदान करता है।

३—कृमि कीटों के नाश के लिए

अथर्ववेद में कहीं-कहीं सरस्वती का आवाहन कृमि कीटों के नाश के लिए किया गया है[४] तथा सरस्वती के साथ सिनीवाली का भी कीटाणु नष्ट करने के लिए आवाहन किया गया है[५]। साथ ही सन्तान के वरदान की भी याचना की गई है।

४—विभिन्न देवों के साथ सरस्वती का आवाहन

अथर्ववेद में भी कई स्थानों पर सरस्वती का आवाहन विभिन्न देवताओं के साथ किया गया है। एक स्थल पर सरस्वती की आराधना वरुण व मित्र के साथ की गई है कि वे पृथ्वी के मध्य भाग व उसके दोनों छोरों को आराधना करने वाले के पास पहुँचा दें[६] सम्भवतः यह मंत्र किसी कुमारी कन्या का प्रेम-प्राप्ति करने के लिए है। एक और मंत्र में सरस्वती का आवाहन इन्द्र और वरुण के साथ करते समय प्रार्थना की गई है कि वे यज्ञ

---

१ अ० वे० १४-२-१५।२०।

२ यस्ते स्तनः शशयुर्यो मयोभूर्यः सुम्नयुः सुहवो यः सुदत्रः।
येन विश्वा पुष्यसि वार्याणि सरस्वति तमिह धातवे कः॥ (अ० वे० ७-११-१)

३ अ० वे० १८-१-४१।४२।४३।

४ ओते मे द्यावापृथिवी ओता देवी सरस्वती।
ओतौ म इन्द्रश्चाग्निश्च क्रिमिं जम्भयतामिति॥ (अ० वे० ५-२३-१)

५ गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि सरस्वति।
गर्भं ते अश्विनोभा धत्तां पुष्करस्रजा॥ (अ० वे० ५-२५-३)।

६ मह्यं त्वा मित्रावरुणौ मह्यं देवी सरस्वती।
मह्यं त्वा मध्यं भूम्या उभावन्तौ समस्यताम्॥ (अ० वे० ६-८९-३)

में पधार कर सोम ग्रहण करें[1]। अन्यत्र सब देवताओं के साथ सरस्वती से प्रार्थना की गई है कि वे सब पर कृपालु बनी रहें[2]।

५—दो सहदेवियों के साथ आवाहन

ऋग्वेद की तरह अथर्ववेद में भी सरस्वती का नाम 'इला और 'भारती' (अथवा 'मही') नामक दो देवियों के साथ मिलता है। इला और मही का वर्णन कुछ इसप्रकार है कि इनका प्रत्यक्ष रूप सरस्वती ही प्रदर्शित होती है[3]। इनकी प्रार्थना और पूजन का उल्लेख स्तोता तथा स्तोता की सन्तान को सब प्रकार के विजय व संरक्षण प्रदान करने के लिए किया गया है। एक स्थान पर सरस्वती की आराधना इला और भारती के साथ की गई है[4] और इन तीनों देवियों का आवाहन यज्ञ में आकर आसन ग्रहण करने के लिए किया गया है। अन्यत्र भी इन तीनों देवियों (इला, भारती व सरस्वती) का एक साथ आवाहन मिलता है[5]। देवताओं की उत्पत्ति तथा सृष्टि निर्माण के सम्बन्ध में भी कहा गया है कि मही-देवी सरस्वती की सहायिका देवी-मानव शरीर की रचना करती है[6]। (यह मंत्र मही की प्रशस्ति में है)। एक स्थल पर तो इला और भारती को भक्ति की देवी सरस्वती का ही स्वरूप प्रदान किया गया है[7]

६—विष के शमन के लिए

विष का प्रभाव नष्ट करने के लिए भी सरस्वती का आवाहन किया गया है। यहाँ तीन सरस्वती का वर्णन मिलता है, जो सम्भवतः तीनों लोकों के रूपक के रूप में हैं[8]।

—० ०—

---

[1] यद् वेद राजा वरुणो यद् वा देवी सरस्वती।
यदिन्द्रो वृत्रहा वेद तद् गर्भकरणं पिब॥ (अ० वे० ५-२५-६)

[2] अ० वे० १९-११-२)।

[3] तिस्रो देवीर्महि नः शर्म यच्छत प्रजायै नस्तन्वे यच्च पुष्टम्।
मा हास्महि प्रजया मा तनूभिर्मा रधाम द्विषते सोम राजन्॥ (अ० वे० ५-३-७)

[4] आ नो यज्ञं भारती तूयमेत्विडा मनुष्वदिह चेतयन्ती।
तिस्रो देवीर्बर्हिरेदं स्योनं सरस्वतीः स्वपसः सदन्ताम्॥ (अ० वे० ५-१२-८)

[5] तिस्रो देवीर्बर्हिरेदं सदन्तामिडा सरस्वती मही भारती गृणाना। (अ० वे० ५-२७-९ उ०)

[6] अ० वे० ११-८-१५।

[7] इडैवास्मां अनु वस्तां व्रतेन यस्याः पदे पुनते देवयन्तः।
घृतपदी शक्वरी सोमपृष्ठोप यज्ञमस्थित वैश्वदेवी॥ (अ० वे० ७-२८-१)

[8] अ० वे० ६-१००-१।

तृतीय अध्याय

महाकाव्यों में सरस्वती

बाल्मीकि रामायण में सरस्वती

आदि काव्य रामायण में भी सरस्वती का उल्लेख मिलता है। यहाँ भी सरस्वती के दो रूप प्रदर्शित हैं—नदी रूप और देवी वाणी अथवा वाक् देवी रूप।

१—नदी रूप

सरस्वती का नदी रूप में वर्णन भरत के कैकेय राज्य (ननिहाल) से अयोध्या लौटने के प्रसंग में मिलता है, जहाँ यह कहा गया है कि वे सरस्वती और गंगा के संगम पर होते हुए और वीर मत्स्य देशों के उत्तर भागों को देखते हुए वरुण वन में पहुँचे।

"सरस्वती च गंगा च युग्मेन प्रतिपद्य च।
उत्तर वीर मत्स्यानां भारुण्डं प्राविशद्वनम्[१] ॥"

२—वाक् देवी रूप

देवी वाणी अथवा वाक् देवी के रूप में सरस्वती को जिह्वा पर वास करने वाली और कण्ठ में निवास करने वाली दोनों कहा है। जिह्वा पर वास करने का उल्लेख उस समय किया गया है, जब कि राम की लंका-विजय के बाद सीता को अपनी पवित्रता का प्रमाण देने के लिए अग्नि में प्रविष्ट होना पड़ता है। उस समय सब देवताओं के साथ साधुवाद देते हुए ब्रह्मा राम से कहते हैं कि वे (ब्रह्मा) उनके (राम के) हृदय हैं और देवी सरस्वती उनकी (राम की) जिह्वा हैं तथा सब देवता उनकी (राम की) रोमावली हैं।

"अहं ते हृदयं राम जिह्वा देवी सरस्वती।
देवा गात्रेषु रोमाणि निर्मिता ब्रह्मणः प्रभो[२] ॥"

देवी सरस्वती के जिह्वा पर विराजने का एक और प्रसंग आता है[३]। कुम्भकर्ण की घोर तपस्या के फलस्वरूप जब ब्रह्मा उसे वरदान देने जाते हैं तब देवता लोग ब्रह्मा से प्रार्थना करते हैं कि सभी लोगों के कल्याण को ध्यान में रखते हुए ही वे कुम्भकर्ण को वरदान दें। देवताओं के इस प्रकार प्रार्थना करने पर

---

[१] रामा० २-७१-५। [२] वही, ६-१२०-२४।

[३] लोकानां स्वस्ति चैव स्याद्भवेदस्य च सम्मति।
एवमुक्तः सुरैर्ब्रह्माऽचिन्तयत्पद्मसम्भवः ॥
चिन्तिता चोपतस्थेऽस्य पार्श्वंदेवी सरस्वती।
प्रांजलिःसा तु पार्श्वस्था प्राह वाक्यं सरस्वती।
इयमस्म्यागता देव किं कार्यं करवाण्यहम्।
प्रजापतिस्तु तां प्राप्तां प्राह वाक्यं सरस्वतीम् ॥
वाणि त्वं राक्षसेन्द्रस्य भव वाग्देवतेप्सिता।
तथेत्युक्त्वा प्रविष्टा सा प्रजापतिरथाब्रवीत् ॥ (रामा० ७-१०-४०,४१,४२,४३)

पद्मसम्भव ब्रह्मा जी ने सरस्वती का स्मरण किया और सरस्वती ने उनके सम्मुख उपस्थित होकर उनसे आज्ञा माँगी। तब ब्रह्मा ने सरस्वती से कहा कि देवताओं की इच्छानुसार तुम इस राक्षस की जिह्वा पर बैठकर इससे तदनुसार कहलाओ। सरस्वती ने ब्रह्मा की आज्ञा का पालन किया और कुम्भकर्ण के मुख में विराजित हुई।

रावण-बलि युद्ध के प्रसंग में सरस्वती को कपिल देव (विष्णु) के कण्ठ में विराजने वाली कहा गया है। यहाँ यह भी वर्णित है कि सरस्वती वीणा धारण किये हैं।

"ग्रीवातस्याभवद्देवी वीणा चापि सरस्वती।
नासत्यौ श्रवणे चोभौ नेत्रे च शशिभास्करौ[1] ॥"

इन प्रसंगों से यह स्पष्ट होता है कि सरस्वती का नियन्त्रण वागोद्भव केन्द्र पर माना जाता था अर्थात् सरस्वती की ही प्रेरणा से वाणी प्रेरित होती है और उन्हीं की इच्छानुसार वाक्य मुख से निकलते हैं। साथ ही साथ यह भी स्पष्ट होता है कि देवी अपने विशिष्ट चिन्ह "वीणा" से युक्त प्रदर्शित होती थीं।

(३) अन्य पर्यायवाची शब्द:—इन उल्लेखों के अतिरिक्त, रामायण में कहीं-कहीं सरस्वती के पर्यायवाची शब्द भी प्रयुक्त हुए जान पड़ते हैं। कुम्भकर्ण को वरदान देते समय ब्रह्मा ने सरस्वती को स्पष्ट रूप से "वाणी" कह कर सम्बोधित किया है। किन्तु अन्य स्थलों पर प्रयुक्त पर्यायवाची शब्द इतने स्पष्ट नहीं हैं।

(अ) अश्वमेधयज्ञ के अवसर पर राम ने जब सीता को राज्य सभा में अपनी पवित्रता का प्रमाण देने को बुलाया तब वे वाल्मीकि ऋषि के पीछे-पीछे इस प्रकार पधारीं जैसे ब्रह्मा के पीछे "श्रुति" आती हैं।

"तां दृष्ट्वा श्रुतिमायान्तीं ब्रह्माणमनुगामिनीम्।
वाल्मीकेः पृष्ठतः सीतां साधुवादो महानभूत्[2] ॥

यहाँ श्रुति शब्द का प्रयोग सम्भवतः सरस्वती के लिए ही हुआ है। क्योंकि "श्रुति" को ब्रह्मा के पीछे-पीछे चलने वाली कहा है। संभवतः श्रुति ब्रह्मा की शक्ति थीं।

(ब) राम के ब्रह्म लोक को प्रयाण करते समय कहा गया है कि राम वेद मंत्रों का पाठ करते हुए सरयू की ओर जा रहे थे तथा ब्राह्मण का रूप धारण किये सब वेद और सब की रक्षा करने वाली गायत्री देवी, ओंकार, वषट्कार और अन्य ऋषि सब स्वर्ग का द्वार खुला देख कर राम के साथ जा रहे थे।

"वेदा ब्राह्मणरूपेण गायत्री सर्वरक्षिणी।
ओंकारोऽथ वषट्कारः सर्वे राममनुव्रताः ॥
ऋषयश्च महात्मानः सर्व एव महीसुराः।
अन्वगच्छन्महात्मानं स्वर्गद्वारमपावृतम्[3] ॥

यहाँ "गायत्री" शब्द सरस्वती का पर्यायवाची प्रतीत होता है, क्योंकि बाद के साहित्य में सावित्री, गायत्री और सरस्वती की व्याख्या एक साथ मिलती है। जैसे:

"गायत्री नाम पूर्वाह्णे सावित्री मध्यमे दिने।
सरस्वती च सायाह्ने सैव सन्ध्या त्रिधा स्मृता[4] ॥

[1] रामा० ७-५-२८।
[2] रामा० ७-९६-११।
[3] वही० ७-१०९-८।९।
[4] वाचस्पत्यं-कोप।

(स) एक स्थल पर रामायण में गायत्री के मन्दिर का भी उल्लेख मिलता है। राम, लक्ष्मण और सीता जब अगस्त्य मुनि के आश्रम में गये तो उन्हें वहाँ कई देवताओं के मन्दिर दिखाई दिये, जिनमें गायत्री देवी का भी मन्दिर था।

"स्थानं तथैव गायत्र्या वसूनां स्थानमेव च।
स्थानं च पाशहस्तस्य वरुणस्य महात्मनः[१] ॥

यहाँ भी "गायत्री" शब्द सरस्वती का पर्यायवाची प्रतीत होता है। साथ ही यह भी ज्ञात होता है कि मन्दिर बनाकर विधिवत् पूजा का प्रचलन था तथा देवी की प्रतिमा अपने विशिष्ट चिन्हों सहित भी बनती रही होगी, जिससे पहिचानन में कठिनाई न हो, क्योंकि बहुत से देवताओं के मन्दिरों का उल्लेख मिलता है।

महाभारत में सरस्वती

महाभारत म सरस्वती का वर्णन कई स्थलों पर मिलता है। अधिकांशतः, ये वर्णन नदी रूप और वाणी-विद्या के देवी रूप सम्बन्धी हैं। कहीं-कहीं तो विस्तारपूर्वक प्रशंसा की गई है। सुविधा के लिए इन प्रसंगों का वर्गीकरण निम्नलिखित ढंग से किया जा सकता है --

१—नदी रूप

महाभारत में सरस्वती उत्तर दिशा की नदी वर्णित हैं, जो बहते हुए समुद्र में मिल जाती है[२]। तीर्थयात्रा के प्रसंग में बलदेव जी कहते हैं कि भीम और दुर्योधन दोनों ही उनके शिष्य रहे हैं। अतः वे उन्हें गदा-युद्ध में नष्ट होते हुए नहीं देख सकते और इस कारण वे सरस्वती-तट के तीर्थों का सेवन करने चले गये। इसी तीर्थयात्रा वर्णन के अन्तर्गत नैमिषारण्य में सरस्वती के पुनः पूर्व-दिशा में लौटने का उल्लेख है[३]। वहीं सरस्वती द्वारा बनाये हुए अनेक निकुंजों एवं 'नैमिषीय' तथा 'सप्त सारस्वत तीर्थ'[४] का भी वर्णन मिलता है। सप्त सारस्वत तीर्थ के सम्बन्ध में अनेक आख्यान हैं, जिनके अनुसार सरस्वती नाम की सात प्रसिद्ध नदियाँ हैं, जो सारे जगत् में परिव्याप्त हैं। शक्तिशाली महात्माओं ने भिन्न-भिन्न देशों में एक-एक सरस्वती का आवाहन किया था, जिससे सात विविध सरस्वती नदियों की उत्पत्ति हुई और वे विविध नामों से आख्यात हुईं[५]। इन सातों सरस्वती नदियों का जल जहाँ एकत्र हुआ उसे सप्त सारस्वत तीर्थ नाम दिया गया। सभा पर्व में वरुण की सभा के प्रसंग के अन्तर्गत सरस्वती नदी का नाम आता है तथा पाण्डवों की दिग्विजय के सम्बन्ध में भी सरस्वती तटवर्ती शूद्रों और आभीरों की पराजय का उल्लेख मिलता है। सरस्वती नदी के तट पर बहुत से तीर्थों और यज्ञों का भी उल्लेख है। वन पर्व में धौम्य मुनि धर्मराज युधिष्ठिर को तीर्थों का माहात्म्य समझाते हुए कहते हैं कि उत्तर दिशा में परम पवित्र सरस्वती तट पर बहुत से तीर्थ हैं और प्लाक्षावतरण नामक मंगलमय तीर्थ में यज्ञ करके सरस्वती नदी में अवभृथ स्नान करने से दिव्यलोक की प्राप्ति होती है। युधिष्ठिर को तीर्थों का माहात्म्य बताते हुए लोमश ऋषि भी कहते हैं कि सरस्वती अत्यन्त पवित्र नदी है, जिसमें स्नान करने से सब पापों से मुक्ति मिलती है। विनशन तीर्थ के बारे में वर्णन करते समय लोमश ऋषि यह भी कहते

---

[१] रामा० ३-१२-२०।

[२] ततो गत्वा सरस्वत्याः सागरस्य च संगमे। (महा० ३.८२.६०)

[३] वही, ९-३७। [४] वही, ९-३८।

[५] कालिन्दी विदिशा वेण्वा नर्मदा वेगवाहिनी।
विपाशा च शतद्रुश्च चन्द्रभागा सरस्वती ॥१९॥ (महा० २-९)

हैं कि इस स्थान पर सरस्वती अदृश्य हो जाती हैं, क्योंकि यह स्थान निषाद देश का द्वार है और सरस्वती यह नहीं चाहतीं कि उन्हें निषाद आदि देखें[१]। आगे चल कर सरस्वती के चमसोद्भेद नामक स्थान पर पुनः प्रकट होने का वृत्तान्त मिलता है जहाँ इनमें समुद्र की ओर बहने वाली अन्य नदियाँ मिल जाती हैं। सरस्वती नदी के तट पर ही काम्यक वन में पाण्डवों के निवास,[२] बालखिल्य ऋषियों[३] तथा कृष्ण द्वारा यज्ञ का[४] उल्लेख मिलता है। यह भी वर्णित है कि प्रलय काल में जब मार्कण्डेय मुनि ने बालक रूपी भगवान के मुख में प्रविष्ट होकर समस्त विश्व का दर्शन किया था तो उसमें गंगा आदि नदियों के साथ उन्हें सरस्वती नदी के भी दर्शन हुए थे।[५]

सरस्वती तट का प्रथम तीर्थ प्रभास क्षेत्र कहा गया है, जहाँ स्नान करके चन्द्रमा ने राजयक्ष्मा से मुक्ति प्राप्त की थी तथा उन्हें अपना खोया हुआ तेज भी फिर से प्राप्त हो गया था। उदपान तीर्थ में सरस्वती को भूमि के अन्दर छिपी हुई कहा गया है। इसके वर्णन में एक आख्यान है कि त्रित नामक मुनि ने (जो अपने भाइयों द्वारा उपेक्षित थे और एक भेड़िये के डर से एक सूखे कूप में गिर गये थे) बालू में जल की और सूखी लता में सोम की भावना के संकल्प से अग्नि उत्पन्न की और यज्ञ किया, जिससे उस कूप से सरस्वती का उद्भव हुआ।[६] अतः यह उदपान तीर्थ सरस्वती नदी के अन्दर ही कहा गया है। आगे विनशन तीर्थ का वर्णन है, जहाँ सरस्वती पुनः लुप्त हो गई हैं।[७] शंख तीर्थ में सरस्वती के तट पर एक विशाल वृक्ष का वर्णन है, जहाँ अनेक यक्ष आदि निवास करते थे। एक पृथूदक नामक तीर्थ[८] का भी वर्णन मिलता है, जहाँ स्नान करके प्राण त्यागने वाले को स्वर्ग की प्राप्ति होती है। सरस्वती के तट पर ही ययाति तीर्थ है, जहाँ ययाति ने यज्ञ किया था, जिसके लिए पर्याप्त सामग्री उन्हें सरस्वती से मिली थी।[९] इन्द्र के एक प्रसंग में कहा गया है कि अरुणा और सरस्वती के संगम पर स्नान करने वाले को ब्रह्महत्या से मुक्ति मिलती है। वृद्ध कन्या-तीर्थ, सारस्वत-तीर्थ तथा समन्त पंचक तीर्थ इत्यादि भी सरस्वती तट पर वर्णित हैं। बलदेव जी का कथन है कि जो सुख सरस्वती के तट पर निवास करने में है, वह और कहीं नहीं है। सरस्वती सब नदियों में पवित्र व कल्याणकारी हैं। अनुशासन पर्व में भी सरस्वती नदी की महत्ता का निरूपण हुआ है। यहाँ भी सरस्वती के लुप्त होने का वर्णन मिलता है।[१०] स्वर्गारोहण पर्व के अनुसार श्रीकृष्ण की सोलह हज़ार स्त्रियों ने सरस्वती नदी में ही अपने भौतिक शरीरों का त्याग किया था।[११]

२—देवी रूप

(क) देवी वाणी :— इस संबन्ध में यह एक महत्व की बात है कि प्रत्येक पर्व के प्रारम्भ में नारायण के साथ देवी सरस्वती की स्तुति इस प्रकार की गई है :—

---

[१] महा० ३-१३० [२] "ददौ सरस्वतीकूले काम्यकं नाम तद्वनम्" ॥४१॥ (३-३६)

[३] महा० ३-९० [४] "आसीः कृष्ण सरस्वत्यां सत्रे द्वादशवार्षिके" ॥९४॥ (महा० ३-१२)

[५] "गंगां शतद्रुं सीतां च यमुनामथ कौशिकीम्।
चर्मण्वतीं वेत्रवतीं चन्द्रभागां सरस्वतीम् ॥१०१॥

[६] महा० ९-३६ [७] वही ९-३७

[८] वही ९-३९ [९] वही ९-४१

[१०] अदृश्या गच्छ भीरु त्वं सरस्वति मरून् प्रति।···॥२७॥ (महा० १३-१५४+१५५)।

[११] षोडशस्त्रीसहस्राणि वासुदेवपरिग्रहः।
अमज्जंस्ताः सरस्वत्यां कालेन जनमेजय॥ ॥२४॥ (महा० १८-५)।

"नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ॥"

भीष्म-पर्व में भीष्म श्रीकृष्ण के दैविक स्वरूप का वर्णन करते हुए कहते हैं कि एक बार ब्रह्मा ने श्रीकृष्ण के विश्व रूप की प्रशस्ति में कहा था कि पृथ्वी आपके चरण हैं, दिशायें आपकी भुजा हैं, द्युलोक आपका मस्तक है मैं आपका स्वरूप हूँ, देवतागण आपके शरीर हैं, चन्द्र, सूर्य आपके नेत्र हैं, तप, सत्य, धर्म व कर्म आपके बल हैं। अग्नि आपका तेज है, वायु आपका श्वास है, जल आपका स्वेद है, अश्विनी कुमार आपके कान हैं तथा देवी सरस्वती आपकी जिह्वा है।[१] भीष्म पर्व में कृष्ण-महिमा के प्रसंग में यह भी कहा है कि अविनाशी परमात्मा ने अपने मुख से अग्नि, प्राणों से वायु तथा मन से सरस्वती और वेदों को उत्पन्न किया है।

"मुखतः सोऽग्निमसृजत् प्राणाद् वायुमथापि च ।
सरस्वतीं च वेदांश्च मनसः ससृजेऽच्युतः ॥"

(ख) वाग्देवता :—शान्ति पर्व में याज्ञवल्क्य कहते हैं कि उन्होंने एक बार यजुर्वेद सीखने के लिए तपस्या की थी, जिसके फलस्वरूप सूर्य प्रकट हुए और उनका अभिप्राय जान कर बोले कि तुम अपना मुख खोलो। वाग्देवी सरस्वती तुम्हारे मुख में प्रवेश करेंगी। ऋषि के मुख फैलाते ही सरस्वती उनमें प्रविष्ट हो गईं। बाद में फिर ऋषि के स्मरण करने पर वाग्देवी सरस्वती ओंकार को आगे करके स्वर, व्यंजन तथा वाणी सहित उनके समक्ष प्रकट हुई।

(ग) वेदमाता :— शान्ति पर्व में भगवान् नारद से कहते हैं कि श्री, लक्ष्मी, कीर्ति, पृथ्वी तथा वेदमाता सरस्वती मेरे अन्दर विराजमान हैं।

(घ) विद्यादेवी :—वन पर्व में तार्क्ष्य की जिज्ञासा पर अपना परिचय देते हुए सरस्वती देवी ने अपने को परापर विद्यारूपा[२] कहा है और आन्तरिक श्रद्धा में ही अपनी स्थिति बताई है।

(ङ) नीति देवी : शान्ति पर्व के एक प्रसंग के अनुसार वर्णसंकरता की दिनोंदिन बढ़ती हुई मात्रा को रोकने के लिए ब्रह्मा ने विष्णु की पूजा करके वरदानी महादेव जी से इसे रोकने के लिए कहा। तब भगवान शूलपाणि ने अपने आपको ही दण्ड के रूप में प्रकट किया, उससे धर्माचरण होता देख नीति देवी सरस्वती ने लोक विख्यात दण्डनीति की रचना की।[३]

---

[१] पादौ तव धरा देवीं दिशो बाहू दिवं शिरः ।
मूर्तिस्तेऽहं सुराः कायश्चन्द्रादित्यौ च चक्षुषी ॥ ५९ ॥
बलं तपश्च सत्यं च कर्म धर्मात्मकं तव ।
तेजोऽग्निः पवनः श्वास आपस्ते स्वेदसम्भवाः ॥ ६० ॥
अश्विनौ श्रवणौ नित्यं देवी जिह्वा सरस्वती ॥ ६१ ॥ (महा० ६-६६)

[२] महा० ३-१८६ ।

[३] तथोक्ता ब्रह्मकन्येति लक्ष्मीर्नीतिः सरस्वती ।
दण्डनीतिर्ज्जगद्धात्री दण्डो हि बहुविग्रहः ॥ २४ ॥ (महा० १२-१२१)
तस्माच्च धर्मचरणन्नीतिर्देवी सरस्वती ।
ससृजे दण्डनीतिं सा त्रिषु लोकेषु विश्रुताम् ॥ २८ ॥ (महा० १२-१२२)

३—मानवी रूप

सरस्वती के मानवी रूप का वर्णन केवल एक ही स्थल पर मिलता है। वन पर्व में लोमश ऋषि युधिष्ठिर को तीर्थों का माहात्म्य बताते हुए श्वेतकेतु ऋषि के आश्रम का वर्णन करते हैं, और कहते हैं कि इसी स्थान पर श्वेतकेतु ऋषि को सरस्वती ने अपने मानवी रूप में दर्शन दिया था।

४—देवी-देवताओं से सम्बन्ध

(क) इन्द्र के साथ :—सभा पर्व के एक प्रसंग में देवी सरस्वती की उपस्थिति इन्द्र के राजभवन में वर्णित है :

"दिव्या आपहस्तथौषध्यः श्रद्धा मेधा सरस्वती"[1] ॥ १९ ॥

(ख) अग्नि के साथ :—देवी सरस्वती को अग्नि की माता भी कहा गया है। वन पर्व के एक प्रसंग में इसका वर्णन इस प्रकार है :

"विचरन् विविधान् देशान् भ्रममाणस्तु तत्र वै।
सिन्धुं नदं पंचनदं देविकाय सरस्वती" ॥ २२ ॥ (महा० ६-२२)
तुङ्गवेणा कृष्णवेणा कपिलाशोण एव च।
एता नद्यस्तु धिष्ण्यानां मातरो याः प्रकीर्तिताः[2] ॥ २६ ॥ (महा० २३-२६)

(ग) दुर्गा के साथ : महाभारत का युद्ध आरम्भ होने के पहिले अर्जुन दुर्गा की स्तुति करते हैं, जिसमें वे दुर्गा का एक नाम सरस्वती भी बताते हैं।[3]

(घ) हयग्रीव के साथ : शान्ति पर्व में भगवान नारायण के हयग्रीव नामक अवतार के सम्बन्ध में कहा है कि सरस्वती और गंगा भगवान हयग्रीव की नितम्ब थीं।

(ङ) ब्रह्मा के साथ : शान्ति पर्व में श्री कृष्ण अर्जुन से अपने नामों की व्याख्या करते हुए कहते हैं कि सत्यस्वरूपा ब्रह्मपुत्री सरस्वती मेरी वाणी है।

दण्डनीति के प्रसंग में भी दण्डनीति को ब्रह्मा की कन्या कहा गया है और सरस्वती को दण्ड के अनेक स्वरूपों में से एक कहा है। इस प्रकार भी सरस्वती ब्रह्मा की कन्या के रूप में प्रदर्शित है।

५—ऋषियों इत्यादि से सम्बन्ध

(क) दधीचि ऋषि और सारस्वत के साथ : महाभारत के एक आख्यान के अनुसार एक बार ब्रह्मचर्य पालन करते हुए दधीचि मुनि ने (जिनका आश्रम सरस्वती नदी के तट पर था) घोर तपस्या की, जिससे इन्द्र के मन में भय उत्पन्न हुआ और उन्होंने अलम्बुषा नामक अप्सरा को उस स्थान पर भेजा, जहाँ दधीचि मुनि तपस्या रत थे। अलम्बुषा को देखते ही मुनि का मन चंचल हो उठा और वे नदी में स्खलित हो गये, जिससे सरस्वती नदी ने गर्भ धारण किया और सारस्वत नामक पुत्र को जन्म दिया।[4]

---

[1] महा० २-७। [2] महा० ६-२३। [3] वही, ३-२२१-२२२।

[4] (अ) महा० ९-५१।
(ब) साधारणतः सरस्वती को सारस्वत की पत्नी कहा गया है, किन्तु यहाँ सरस्वती को सारस्वत की माता का रूप दिया गया है।

(ख) मतिनार के साथ : आदि पर्व में एक स्थान पर पुरुष-वंश के वर्णन के अन्तर्गत कहा गया है कि कक्ष की ज्वाला नामक पत्नी से मतिनार का जन्म हुआ था, जिसने बारह वर्ष तक सरस्वती तट पर सर्वगुण सम्पन्न यज्ञ किया। यज्ञ की समाप्ति पर सरस्वती ने प्रकट होकर मतिनार से विवाह किया तथा उसके द्वारा तंसु नामक पुत्र को जन्म दिया।[१]

(ग) मनु के साथ : भीष्म पर्व में सरस्वती को मनु की पत्नी भी कहा गया है।[२] मनु की पत्नी शतरूपा भी हैं। अतः शतरूपा और सरस्वती का सम्बन्ध भी साथ ही साथ स्थापित होता है।

६—नदियों से सम्बन्ध

भीष्म पर्व में गंगा नदी की सात धाराओं में से सरस्वती को एक कहा गया है। यह वर्णन इस प्रकार है :—

"तत्र दिव्या त्रिपथगा प्रथमन्तु प्रतिष्ठिता।
ब्रह्मलोकादपक्रान्ता सप्तधा प्रतिपद्यते ॥४८॥
वस्वोकसारा नलिनी पावनी च सरस्वती।
जम्बू नदी च सीता च गंगा सिन्धुश्च सप्तमी[3] ॥४९॥
दृश्यादृश्या च भवति तत्र तत्र सरस्वती।
एता दिव्याः सप्त गंगास्त्रिषु लोकेषु विश्रुताः ॥५१॥

एक और श्लोक भी सम्भवतः इसी प्रसंग में प्रयुक्त हुआ है।[४] यहाँ यह ध्यान देने योग्य बात है कि रामायण में भी यद्यपि गंगा की सात धाराओं का वर्णन मिलता है, किन्तु वहाँ पर सरस्वती का नाम किसी भी धारा के सम्बन्ध म वर्णित नहीं है। रामायण का वर्णन इस प्रकार है :—

"विससर्ज ततो गंगा हरो बिन्दुसरः प्रति।
तस्यां विसृज्यमानायां सप्त स्रोतांसि जज्ञिरे॥
ह्लादिनी पावनी चैव नलिनी च तथाऽपरा।
तिस्रः प्राची दिशं जग्मुर्गंगाः शिवजलाः शुभाः॥
सुचक्षुश्चैव सीता च सिन्धुश्चैव महानदी।
तिस्रस्त्वेता दिशं जग्मुः प्रतीचीं तु शुभोदकाः॥ (रामा० १-४३-१२।१३।१४)

---

[१] मतिनारः खलु सरस्वत्यां गुणसमन्वितं, द्वादशवार्षिकं सत्रमाहरत्।
समाप्ते च सत्रे सरस्वत्यभिगम्य तं भर्तारं वरयामास। स तस्यां पुत्रमजीजनत्तंसु नाम ॥२५॥
(महा० १-९५)।

[२] रेमे स तस्यां राजर्षि प्रभावत्यां यथा रविः।
स्वाहायां च यथा वह्निर्यथा शच्यां च वासवः ॥८॥
……यथा भूम्यां भूमिपतिरुर्वश्यां च पुरूरवाः।
अचीकः सत्यवत्यां च सरस्वत्यां यथा मनुः ॥१४॥ (महा० ६।११७)

[3] महा० ६-६।

[४] 'आर्य्या म्लेच्छाश्च कौरव्य तैमिश्राः पुरुषा विभो।
नदीं पिवन्ति विपुलां गंगां सिन्धुं सरस्वतीम् ॥१३॥ (महा० ६-९)।

अर्थात् —

···और गंगा को हिमालय पर्वत पर स्थित बिन्दुसर में छोड़ा। छोड़ते ही गंगा की सात धारायें होगईं। उस सर से गंगा जी की ह्लादिनी, पावनी एवं नलिनी नामक तीन धारायें पूर्व की ओर और सुचक्षु, सीता तथा सिन्धु नामक तीन धाराएँ पश्चिम की ओर बहीं।

अन्य पर्यायवाची शब्द : सरस्वती देवी के लिए अन्य, पर्यायवाची शब्दों का भी प्रयोग कहीं-कहीं हुआ है। इस सम्बन्ध में शल्यपर्व का एक प्रसंग[१] विशेष रूप से उल्लेखनीय है जहाँ वशिष्ठ मुनि देवी सरस्वती की प्रशंसा करते हैं। यहाँ पर वशिष्ठ मुनि ने देवी सरस्वती के लिए पुष्टि, धुति, कीर्ति, सिद्धि, बुद्धि, उमा, वाणी और स्वाहा शब्दों का प्रयोग किया है। साथ ही यह भी कहा है कि यह सम्पूर्ण जगत आप पर निर्भर है और आप सब प्राणियों में विद्यमान हैं।

सरस्वती पूजा : महाभारत में देवी सरस्वती की पूजा के भी संकेत मिलते हैं। एक स्थल पर श्री कृष्ण के प्रश्न करने पर कि वे किन-किन देवताओं की पूजा करते हैं नारद ने बहुत से देवी-देवताओं के नाम गिनाये, जिनमें देवी सरस्वती का नाम भी था।[२] इसीप्रकार इस बात का भी संकेत मिलता है कि मंदिरों में देवी की प्रतिमायें विधिवत स्थापित की जाती थी और उनकी पूजा होती थी। युधिष्ठिर की तीर्थ-यात्रा के प्रसंग में उल्लेख मिलता है कि समुद्र तट पर स्थित सूरपारक स्थान (आधुनिक सोपाश) के पास उन्होंने सरस्वती तथा अन्य देवताओं के पवित्र मन्दिरों में जाकर उनके दर्शन किये।[३]

---

[१] महा० ९-४२।४३। ३, ३७, ३३।

[२] श्रुणु गोविन्द यानेतान् पूजयाम्यरिमर्दन।
॥५॥
वरुणं वायुमादित्यं पर्जन्यं जातवेदसम्।
स्थाणुं स्कन्दं तथा लक्ष्मीं विष्णुं ब्रह्माण्डमेव च ॥६॥
वाचस्पतिं चन्द्रमसमपः पृथ्वीं सरस्वतीम्।
सततं ये नमस्यन्ति तान् नमस्याम्यहं विभो ॥७॥ (महा० १३-३१)

[३] सरस्वत्याः सिद्धगणस्य चैव पुण्याश्च ये चाप्यमरास्तथान्ये ॥
पुण्यानि चाप्यायतनानि तेषां ददर्श राजा सुमनोहराणि ॥१३॥ (महा० ३-११८)

चतुर्थ अध्याय

पौराणिक साहित्य में सरस्वती

१—वैदिक स्वरूप का पौराणिक स्वरूप में परिवर्तन

वैदिक तत्वों और वैदिक सूत्रों में निहित संकेतों का पूर्ण विकास पौराणिक साहित्य में मिलता है। देवी सरस्वती के स्वरूप का पूर्ण विकास भी पुराणों में ही हुआ है। कालक्रम के अनुसार पुराणों में वर्णित और वेदों में वर्णित देवी के स्वरूप में काफी अन्तर है और बाह्य रूप से दोनों एक-दूसरे से भिन्न प्रतीत होते हैं, किन्तु वास्तव में यह केवल मध्यस्थ काल में देवी के विकसित रूप का द्योतक है। अतः पुराणों में वर्णित रूप का उल्लेख करने के पहिले यह जानना आवश्यक है कि यह परिवर्तन किस क्रम से हुआ।

ऋग्वेद में सरस्वती को "देवितमै" कहा है।[1] परन्तु पुराणों में इन्हें ब्रह्मा, विष्णु, और महेश द्वारा पूजित कह कर और भी उच्च कोटि का स्थान प्रदान किया है और सर्वव्यापी तथा दिव्य दोनों रूपों में प्रस्तुत किया है।[2] फिर भी पुराणों में वर्णित "नदी देवी", "वाक् की देवी" के स्वरूपों का मूल देवी का वैदिक रूप ही है। ऋग्वेद में "सरस्वती" और "भारती" दो पृथक्-पृथक देवियाँ हैं यद्यपि इनके कार्य लगभग एक समान ही हैं, परन्तु पुराणों में भारती सरस्वती के अन्दर समाविष्ट हैं। इस प्रकार पुराणों में सरस्वती का ही दूसरा नाम भारती है और इसी देवी के दो नाम हो गए—"सरस्वती" और "वाग्देवता"। यह ठीक है कि इनका स्पष्ट सम्बन्ध वाक् या वाग्देवता के रूप में ऋग्वेद में नहीं मिलता।[3] इनके "वाक्" नाम का परिचय सर्व प्रथम ब्राह्मणों में मिलता है—विशेषकर ऐतरेय ब्राह्मण[4] और शतपथ ब्राह्मण[5] में—और फिर आगे चलकर पुराणों में ये पूर्ण रूप से "वाग्देवता" या "वाग्देवी" के नाम से वर्णित हैं।[6] कहीं-कहीं तो (जैसे भागवत पुराण और ब्रह्मवैवर्त पुराण में "वाक्" अथवा "वाणी" शब्द का तात्पर्य ही सरस्वती से है।[7] दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि "वाक्" अथवा "वाणी" सरस्वती का पर्यायवाची शब्द हो गया। पुराणों में सरस्वती स्पष्ट रूप से प्रेरणा देने वाली और ज्ञान तथा विद्या की देवी के रूप वर्णित हैं।[8]

'यास्क' के अनुसार बादलों में निहित नाद 'माध्यमिक वाक्' है। देवराज याजवन का भी कुछ ऐसा ही कथन है। सरस शब्द का पर्यायवाची 'उदक' (अर्थात्—जल) है, अतः सरस्वती वर्षा की हुई।

---

[1] ऋ० वे० २-४१-१६।

[2] सरस्वती स्तोत्र—मा० पु० (अध्याय—२३) वा० पु० (अध्याय ३२)

[3] केवल "चौदयित्री सुनृतानाम्" (उत्तम वाणी का संचार करने वाली) कहा है। ऋ० वे० १-३-११।

[4] ऐ० ब्रा०—'वाग्वि सरस्वती' (३-२), 'वाग्वे सरस्वती पावीरवी' (३-२७), 'वाग्वेसरस्वती' (२-४६ और ६-७)।

[5] श० ब्रा०—'वाक्' (७-५-१-३१ और ११-२-४-९), वाग्वे सरस्वती (२-५-४-६ और ३-९-१-७)।

[6] ब्र० वै० पु०—'वाग्देवतायाः स्तवनं' (२-५-१), 'स्तुहि वाग्देवीं' (२-५-४)।

[7] भा० पु० "वाचं दुहितरं तन्वीं" (३-१२-२८)।
ब्र० वै० पु० "उवाच वाणीं श्रीकृष्ण"—(२-२-५८)।

[8] ब्र० वै० पु०—"ज्ञानाधिदेवी" (२-५-११) दे० भा० पु० "विद्याधिष्ठातृदेवता" (९-४-७)।

(वृष्टयधि देवता) और इस प्रकार उनका परिचय 'माध्यमिक वाक्' अर्थात् 'उदकवती' के रूप में दिया है। साथ ही यह भी कहा है कि 'माध्यमिक वाक्' और 'वर्षा की अधिष्ठात्री देवी' 'सरस्वती नदी' भी थीं। वामन पुराण में सरस्वती का गुण गान करते हुए ऋषि वसिष्ठ ने इन्हें अपनी इच्छा से विचरण करने वाली और बादलों से जल उत्पन्न करने वाली देवी कहा है।[१] स्कन्द पुराण में भी सरस्वती को 'वृष्टि' के नाम से सम्बोधित किया गया है।[२] वामन पुराण में तो यहाँ तक लिखा है कि समस्त जल स्वयं सरस्वती हैं।[३] इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि वैदिक विचार धारा की तरह पुराणों के अनुसार भी ये अन्तरिक्ष की देवी हैं।

वेदों की तरह पुराणों में भी सरस्वती के निम्नलिखित तीन मुख्य स्वरूप वर्णित हैं :—

(१) आध्यात्मिक रूप :—बुद्धि और वाक् को प्रेरित करने वाली तथा उनकी वर्धक देवी, धन-धान्य, प्रसिद्ध तथा समृद्धि देने वाली देवी, ऋषियों द्वारा यज्ञों में आवाहन की जाने वाली देवी, जो बहुधा अपनी दो बहनों 'इला' और 'भारती' के साथ प्रदर्शित हैं।

(२) भौतिक रूप :—ऋषियों द्वारा और कभी-कभी इन्द्र तथा अन्य देवताओं द्वारा पूजित 'नदी देवी'।

(३) पार्थिव रूप :—पर्वतों से निकल कर समुद्र तक बह कर जाने वाली अपनी सहायक नदियों सहित पवित्र 'सरस्वती नदी' (जिसमें वैदिक काल की सात प्रसिद्ध नदियाँ—सप्त सिन्धु भी हैं)।

अन्तर केवल इतना ही है कि वेदों की तुलना में पुराणों में इनका विवरण अधिक विस्तृत रूप से और बहुधा मिश्रित ढंग से है। वामन पुराण में ऋषि मार्कण्डेय ने इनकी प्रशंसा करते समय इन्हें निखिल विश्व की जननी और वेदों का मूल कहा है।[४] पद्म पुराण में सरस्वती की प्रशंसा करते समय देवता लोगों ने इन्हें विभिन्न विज्ञानों और विषयों की देवी कहा है तथा इनका परिचय समुद्र तक बह कर जाने वाली पवित्र नदी के रूप में दिया है।[५]

सरस्वती के कुछ पर्यायवाची नामों की व्याख्या का भी उल्लेख पुराणों में है। उदाहरणार्थ देवी भागवत[६] और ब्रह्मवैवर्त पुराण[७] की व्याख्या इस प्रकार है :

---

[१] वा० पु०—"त्वमेव कामगा देवि मेघेषु सृजसे पयः" (४०-१४)।

[२] स्क० पु०—"वृष्टि" (६-४६-२८)।

[३] वा० पु०—"सर्वास्त्वापस्त्वमेवेति" (४०-४१)

[४] वा० पु०—"त्वं देवि सर्वलोकानां माता वेदारणिः शुभा"। (३२-६)

[५] प० पु०—"यज्ञविद्या महाविद्या गुह्यविद्या च शोभना।
आन्वीक्षिकी त्रयीविद्या दण्डनीतिश्च कथ्यते ॥ (५-२७-११८)
नमोस्तु ते पुण्यजले नमः सागरगामिनि।
नमस्ते पापनिर्मोके नमो देवि वरांगने ॥ (५-२७-११९)

[६] दे० भा० पु०—"भारती भारतं गत्वा ब्राह्मी च ब्रह्मणः प्रिया।
वाण्यधिष्ठातृदेवी सा तेन वाणी प्रकीर्तिता ॥
सरोवाप्यां च स्रोतस्सु सर्वत्रैव हि दृश्यते।
हरिः सरस्वांस्तस्येयं तेन नाम्ना सरस्वती ॥ (९-८-२, ३)

[७] ब्र० वै० पु०— भारती भारतं गत्वा ब्राह्मी च ब्राह्मणः प्रिया।
वागधिष्ठातृदेवी सा तेन वाणी च कीर्तिता ॥
सर्वं विश्वं परिव्याप्य स्रोतस्येव हि दृश्यते।
हरिः सरःसु तस्येयं तेन नाम्ना सरस्वती ॥ (२-७-२, ३)

(१) भारती –भारत में प्रचारित होने के कारण ये भारती कहलायीं।
(२) ब्राह्मी—ब्रह्मा की पत्नी होने के कारण ब्राह्मी कहलायीं।
(३) वाणी—वाणी की अधिष्ठातृ देवी होने के कारण वाणी कहलायीं।
(४) सरस्वती—देवता सरस्वान् से सम्बन्ध होने के कारण सरस्वती कहलायीं।

इन सब से यही सिद्ध होता है कि सरस्वती के पुराणों में वर्णित स्वरूप का मूल आधार उनका वैदिक रूप ही है।

२—पुराणों के अनुसार सरस्वती की उत्पत्ति

सरस्वती की उत्पत्ति के विषय में पुराणों में अनेक विवरण मिलते हैं और वे सब विश्व सम्बन्धी अथवा मनोविज्ञान सम्बन्धी महत्वपूर्ण प्रतीकात्मक या लाक्षणिक लोक कथाओं के रूप में हैं। इनमें से कुछ प्रमुख व्याख्याओं का उल्लेख इस प्रकार है :—

१—ब्रह्मवैवर्त पुराण तथा देवी भागवत पुराण में देवी सरस्वती उन पाँच स्वरूपों में से एक है, जिन्हें विभिन्न उद्देश्यों से सृष्टि-निर्माण के समय 'मूल प्रकृति' (या दूसरे शब्दों में—ब्रह्मा की शक्ति) धारण करती है। सृष्टि निर्माण के लिए आत्मा ने दो रूप धारण किये। दाहिना भाग पुरुष तथा वाम भाग प्रकृति कहलाया। श्रीकृष्ण अर्थात् "पर ब्रह्म" की इच्छानुसार प्रकृति ने पाँच रूपों में अपने को व्यक्त किया, जिनके नाम थे दुर्गा, राधा, लक्ष्मी, सरस्वती और सावित्री।[1]

इन्हीं पुराणों में सरस्वती की उत्पत्ति के विषय में एक और विवरण मिलता है, जिसके अनुसार सृष्टि-निर्माण के समय श्रीकृष्ण की शक्ति की जिह्वा से सुन्दर पीत वस्त्र धारण किए हुए आभूषणों से सुसज्जित, हाथ में वीणा तथा पुस्तक लिए हुए श्वेत वर्ण की एक कन्या उत्पन्न हुई जो सर्व शास्त्रों की अधिष्ठातृ देवी सरस्वती या वाणी थी।[2]

वायु पुराण की एक व्याख्या[3] के अनुसार ब्रह्मा के रोष से एक पुरुष उत्पन्न हुआ, जिसका आधा भाग पुरुष और आधा भाग नारी का था। ये वास्तव में शंकर थे। ब्रह्मा के कहने पर उन्होंने अपने शरीर को दो भागों

---

[1] ब्र० वै० पु० -गणेशजननीदुर्गा राधा लक्ष्मीः सरस्वती।
सावित्री च सृष्टिविधौप्रकृतिः पंचधास्मृता ॥ (२-१-१, २-४-४)

[2] ब्र० वै० पु०—एतस्मिन्नन्तरे देवीजिह्वाग्रात्सहसा ततः।
आविर्बभूव कन्यैका शुक्लवर्णा मनोहरा ॥
पीतवस्त्रपरीधाना वीणापुस्तकधारिणी।
रत्नभूषणभूषाढ्या सर्वशास्त्रधिदेवता ॥ (२-२-५४—५५)

[3] वायु पु०—१-९-६७ इत्यादि।
—तेष्वेव निरपेक्षेषु लोकवृत्तानुकारणात् ॥ ६७ उ० ॥ हिरण्यगर्भोभगवान् परमेष्ठी ह्यचिन्तयत्। तस्यरोषात्समुत्पन्नः पुरुषो वार्कसमद्युतिः। अर्धनारीनरवपुस्तेजसा ज्वलनोपमः ॥ ६८ ॥ सर्व-तेजोमयं जातमादित्यसमतेजसम्। विभक्त्वाजात्मनमित्युक्ते तत्रैवान्तरधीयत ॥ ६९ ॥ एवमुक्त्वा द्विधाभूतः पृथक् स्त्री पुरुषः पृथक्। सचैकादशधा जज्ञे अर्धमात्मानमीश्वरः ॥ ७० ॥ तत्र या सा महाभागा शंकरस्यार्द्धकायिनी ॥ ७५ उ० ॥ प्रागुक्ता तु मया तुभ्यं स्त्री स्वयंभोर्मुखोद्गता।

में विभाजित किया। उनके शरीर के पुरुष और नारी भाग पृथक्-पृथक् होकर एक पूर्ण पुरुष और एक पूर्ण नारी के रूप में हो गए। पुरुष को ब्रह्मा ने फिर विभाजित होने की आज्ञा दी और उसने इस आज्ञा के अनुसार अपने को ग्यारह भागों में बाट लिया। ये ग्यारहों भाग रुद्र कहलाये। इसी प्रकार ब्रह्मा ने नारी को भी दो भागों में विभाजित होने के लिए कहा। नारी का दाहिना भाग श्वेत और बाँया भाग श्याम था। विभाजन होने पर श्वेत और श्याम भाग अलग-अलग होकर एक श्वेत और एक श्याम नारी के रूप में हो गए। इसी श्वेत भाग के (जिसका वास्तविक नाम गौरी है) कई रूपों में से एक रूप सरस्वती भी है।

वायु पुराण की ही एक दूसरी व्याख्या[१] के अनुसार जब "विश्व रूप" नामक तैंतीसवाँ कल्प प्रारम्भ हुआ तब ब्रह्मा के मन में सृष्टि रचना का विचार उत्पन्न हुआ। इसके लिए उन्हें एक सन्तान की इच्छा हुई। तब उन्होंने ध्यान लगाया जिससे "विश्वरूपा सरस्वती" उनके अन्दर से महानाद करती हुई प्रकट हुई। स्वयं ब्रह्मा के ही शरीर से प्रकट होने के कारण वे ब्रह्मा की सन्तान कहलाई। इनका रूप चार मुख, चार सींग, चार नेत्र चार दाँत और चार हाथों वाली गौ का था। यह गौ स्वयं "प्रकृति" थीं—वह प्रकृति जो सम्पूर्ण विश्व की मूल स्रोत हैं या दूसरे शब्दों में सम्पूर्णविश्व की माता हैं।

३ – मत्स्य पुराण के अनुसार सरस्वती ब्रह्मा के शरीर से उत्पन्न हुई उनकी पुत्री हैं[१]। ब्रह्मा ने जब सृष्टि-निर्माण के हेतु ध्यान लगाया तो उनका शरीर दो भागों में विभक्त हो गया। एक भाग पुरुष और दूसरा भाग स्त्री था। यह स्त्री रूप देवी सरस्वती या भारती थीं। ब्रह्मा के शरीर से उत्पन्न होने के कारण ही वे ब्रह्मा की आत्मजा या पुत्री कहलाईं[२]।

४ - ब्रह्माण्ड पुराण के ललितोपाख्यान के अनुसार देवी महालक्ष्मी ने (जिन्हें कामाक्षी या त्रिपुर

कायार्द्धं दक्षिणन्तस्याः शुक्लं वामं तथा सितम् ॥ ७६ ॥ आत्मानं विभजस्वेति सोक्ता देवी स्वयंभुवा। सा तु प्रोक्ता द्विधा भूता शुक्ला कृष्णा च वै द्विजाः ॥ तस्या नामानि वक्ष्यामि शृणुध्वं सुसमाहिताः ॥ ७७ ॥ स्वाहा स्वधा महाविद्यामेधा लक्ष्मी : सरस्वती ॥ ७८ पू० ॥—लोके गौरीति विश्रुता ॥ ७९ ॥—विश्वरूपमयार्यायाः पृथग्देहविभावनात् ॥ ८० पू० ॥

[१] वायु० पु०—१-२३-३४ इत्यादि —

—ब्रह्मणः पुत्रकामस्य ध्यायतः परमेष्ठितः। प्रादुर्भूता महानादा विश्वरूपा सरस्वती ॥ ३ ॥—प्रकृतिं विद्धितां ब्रह्मंस्त्वत्प्रसूतिं महेश्वरीम् ॥ ४९ उ० ॥ सैषा भगवती देवी तत्प्रसूतिः स्वयंभुवः। चतुर्मुखी जगद्योनिः प्रकृतिर्गौः प्रकीर्तिता। प्रधानं प्रकृतिं चैव यदाहुस्तत्त्वचिन्तकाः ॥ ५० ॥

[२] म० पु०—३-३० इत्यादि—

(एतत्तस्वात्मकं कृत्वा जगद् वेधा अजीजनत् ॥ २९ उ० ॥) सावित्री लोक सृष्ट्यर्थं हृदि कृत्वा समास्थितः। ततः संजपतस्तस्य भित्वा देहकल्मषम् ॥ ३० ॥ स्त्रीरूपमर्धमकरोदर्धं पुरुषरूपवत्। शतरूपा च सा ख्याता सावित्री च निगद्यते ॥ ३१ ॥ सरस्वत्यथ गायत्री ब्रह्माणी च परंतप। ततः स्वदेहसंभूतामात्मजामित्यकल्पयत् ॥ ३२ ॥

[३] मा० पु० (३-१२-२८), ब्रह्माण्ड पु० (३-३५-४४), ब्र० पु० १०१-४, १०२-२), प० पु० (५-३७-७९), स्क० पु० (७-३३-१६, २० व ७-३५-१७) इत्यादि।

सुन्दरी भी कहते हैं) तीन अण्डे दिये[१]। गिरा अर्थात् सरस्वती-शिव के साथ इन तीनों अण्डों में से एक से पैदा हुई। अन्य दो अण्डों में से भी इसी तरह दो अन्य जोड़े निकले--एक से अम्बिका और विष्णु तथा दूसरे से श्री और ब्रह्मा। महालक्ष्मी ने तब सरस्वती को ब्रह्मा के साथ, अम्बिका अर्थात् पार्वती को शिव के साथ और श्री अर्थात् लक्ष्मी को विष्णु के साथ सम्बन्धित किया।

इसी तरह का एक दूसरा उल्लेख मार्कण्डेय पुराण में देवी माहात्म्य के "प्राधानिक रहस्य" में भी है[२]। देवी महालक्ष्मी ने (जो तीन गुणों से युक्त थीं) एक तामसिक और दूसरा सात्विक रूप धारण किया। तामसिक रूप महाकाली और सात्विक रूप महा सरस्वती कहलाया। इन तीनों--महा-लक्ष्मी, महाकाली और महा सरस्वती-देवियों की चार-चार भुजायें थीं। प्रत्येक ने स्त्री-पुरुष के एक-एक युग्म उत्पन्न किये। महालक्ष्मी ने

---

[१] ब्रह्माण्ड पु० (४-४०-५)।
इयमेव महालक्ष्मीः ससर्जाण्डत्रयं पुरा ॥ ५ उ० ॥ परत्रयाणामावासं शक्तीनांतिसृणामपि। एकस्मादण्डतो जातावंबिकापुरुषोत्तमौ ॥ ६ ॥ श्रीविरिंचौ ततो न्यस्मादन्यस्माच्च गिराशिवौ। इन्दिरां योजयामास मुकुन्देन महेश्वरी। पार्वत्या परमेशानं सरस्वत्या पितामहम् ॥ ७ ॥

[२] प्राधानिक रहस्य—
सर्वस्याद्या महालक्ष्मीस्त्रिगुणा परमेश्वरी। ४ पू०।
शून्यं तदखिलं लोकं विलोक्य परमेश्वरी।
बभार परमं रूपं तमसा केवलेन हि ॥७॥
महालक्ष्मीः स्वरूपमपरं नृप। सत्वाख्येनाति शुद्धेन गुणेनेन्दुप्रभं दधौ ॥१४॥
अथोवाच महालक्ष्मीर्महाकालीं सरस्वतीम्।
युवां जनयतां देव्यौ मिथुने स्वानुरूपतः ॥१७॥
इत्युक्त्वा ते महालक्ष्मीः ससर्ज मिथुनं स्वयम्।
हिरण्यगर्भौ रुचिरौ स्त्रीपुंसौ कमलासनौ ॥१८॥
ब्रह्मन् विधे विरिंचेति धावरित्याह तं नरम्।
श्रीः पद्मे कमले लक्ष्मीत्याह माता च तां स्त्रियम् ॥१९॥
महाकाली भारती च मिथुने सृजतः सह ॥२० पू०॥
नीलकण्ठं रक्तबाहुं श्वेतांगं चन्द्रशेखरम्।
जनयामास पुरुषं महाकाली सितां स्त्रियम् ॥२१॥
स रुद्रः शंकरः स्थाणुः कपर्दी च त्रिलोचनः।
त्रयी विद्या कामधेनुः सा स्त्री भाषाक्षरा स्वरा ॥२२॥
सरस्वती स्त्रियं गौरीं कृष्णं च पुरुषं नृप।
जनयामास नामानि तयोरपि वदामि ते ॥२३॥
विष्णुः कृष्णो हृषीकेशो वासुदेवो जनार्दनः।
उमा गौरी सती चण्डी सुन्दरी सुभगा शिवा ॥२४॥
ब्रह्मणे प्रददौ पत्नीं महालक्ष्मीपुनस्त्रयीम्।
रुद्राय गौरीं वरदां वासुदेवाय च श्रियम्।

ब्रह्मा और श्री (लक्ष्मी) को, महाकाली ने रुद्र और त्रयी (सरस्वती) को तथा महासरस्वती ने विष्णु और उमा (गौरी) को जन्म दिया। महालक्ष्मी ने तब त्रयी (सरस्वती) ब्रह्मा को, उमा रुद्र को और श्री वासुदेव को पत्नी के रूप में दीं।

२—पुराणों में सरस्वती के पर्यायवाची शब्द—

देवी सरस्वती के बहुत से पर्यायवाची नाम पुराणों में मिलते हैं, जो इनके प्रतीकात्मक, मनोवैज्ञानिक, दैविक, पार्थिव इत्यादि रूपों को प्रदर्शित करते हैं। इनमें से कुछ प्रमुख नामों का विवरण इस प्रकार है।

मत्स्य पुराण में "देहसंभूता" के अतिरिक्त शतरूपा, सावित्री, सरस्वती, गायत्री और ब्रह्माणी :

'शतरूपा च सा ख्याता सावित्री च निगद्यते' ॥
'सरस्वत्यथ गायत्री ब्रह्माणी च परंतप ॥' (३-३१ व ३२)

पद्म पुराण में मति, स्मृति, प्रज्ञा, मेधा, बुद्धि एवं गिरा (वाक्) :

'मतिः स्मृतिस्तथा प्रज्ञा मेधा बुद्धिर्गिरा शुभा'।
'सरस्वत्याः सुपर्यायाः षडेते संप्रकीर्तिताः ॥' (५-१८-२१७ व २१८)

स्कन्द पुराण में ये ६ नाम देवी सरस्वती के नहीं अपितु उनके उपासकों के कहे गये हैं :

'मतिः स्मृतिस्तथा प्रज्ञा मेधा बुद्धिगिरा धरा।'
'उपासिकाः सरस्वत्याः षडेताः प्रास्थितास्तदा ॥" (७-३५-२८ व २९)

मार्कण्डेय पुराण और प्राधानिक रहस्य में महाविद्या, महावाणी, भारती, वाक्, सरस्वती, आर्या, ब्राह्मी, कामधेनु, वेदगर्भा, धी, ईश्वरी :

'महाविद्या महावाणी भारती वाक् सरस्वती।
आर्या ब्राह्मी कामधेनुर्वेदगर्भा च धीश्वरी ॥ (श्लोक—१६)

सरस्वती के उपर्युक्त नाम "महासरस्वती" के हैं, जो कि महालक्ष्मी की सात्विक स्वरूप थीं। किन्तु जो देवी शिव के साथ महाकाली द्वारा उत्पन्न हुई थीं उन्हें त्रयी, विद्या, कामधेनु, भाषा, अक्षरा और स्वर नाम दिये गये हैं ("त्रयी विद्या कामधेनुः सा स्त्री भाषाक्षरा स्वरा") जो निश्चय ही सरस्वती के पर्यायवाची शब्द हैं, और इस प्रकार यह देवी सरस्वती, महासरस्वती से भिन्न प्रदर्शित की गई हैं।

स्कन्द पुराण में—इन्हें "शारदा" नाम से सम्बोधित किया गया है। (७-३३-८७)। किन्तु सरस्वती रहस्योपनिषद् के अनुसार "शारदा" नाम देवी के एक विशेष रूप का है, जो काश्मीर में निवास करती हैं :

'नमस्ते शारदे देवि काश्मीरपुरवासिनि'

देवी के इन विविध नामों का वर्गीकरण निम्नलिखित ढंग से किया जा सकता है।

(१) वाक् सम्बन्धी—वाक्, वाणी, गिरा, भारती, सरस्वती, भाषा, अक्षरा, स्वरा, रसना इत्यादि।

(२) बुद्धि संबंधी—मति, स्मृति, बुद्धि, प्रज्ञा, मेधा इत्यादि

(३) ज्ञान सम्बन्धी—विद्या, महाविद्या, त्रयी इत्यादि।

(४) पार्थिव—शतरूपा, विश्वरूपा, शारदा इत्यादि।

(५) देवताओं से सम्बन्धित—ब्रह्मसुता, ब्राह्मी, ब्रह्माणी, सावित्री इत्यादि।

४ देवी सरस्वती के विविध विशेषण :—

जिस तरह ऋग्वेद में देवी सरस्वती के लिए "ऋतावरी" "वाजिनीवती", "मरुत्वती", हिरण्यवर्त्तनिः" "पावीरवी", "वृत्रघ्नी" इत्यादि विशेषणों का उल्लेख मिलता है, उसी तरह पुराणों में भी देवी के बहुत से विशेषण और गुण वर्णित हैं, जो उनके पौराणिक स्वरूप पर भी काफी प्रकाश डालते हैं। सुविधा के लिए इनका वर्गीकरण कुछ उदाहरणों सहित निम्नलिखित ढंग से किया जा सकता है।

(क) वाक् सम्बन्धीः—ब्रह्मवैवर्त पुराण-वाग्देवता, वाग्देवी, वाग्वादिनी, वर्णाधिदेवी, सर्ववर्णात्मिका-सर्वकण्ठवासिनी, जिह्वाग्रवासिनी, कविजिह्वाग्रवासिनी, गद्यपद्यवासिनी[१]।

मत्स्य पुराण—ब्रह्मवासिनी[२]।
ब्रह्म पुराण—वागीशा[३]।
प्राधानिक रहस्य—महावाणी।

(ख) मस्तिस्क सम्बन्धीः—ब्रह्मवैवर्त पुराण—स्मृति शक्ति, ज्ञान शक्ति, बुद्धिशक्तिस्वरूपिणी, कल्पनाशक्ति, प्रतिभा, विचारकारिणी[४]।

स्कन्द पुराण—मनस्विनी, धृति, मेधा, भक्ति, तुष्टि, रति, प्रीति, लज्जा, शान्ति, स्मृति, दक्षा, क्षमा[५]।
पद्म पुराण—श्रद्धा, परानिष्ठा, सिद्धि[६]।

(ग) ज्ञान और विद्या सम्बन्धीः—

ब्रह्म वैवर्त पुराण—विद्याधिदेवता, सर्वविद्याधिदेवी, विद्यास्वरूपा, सर्वविद्यास्वरूपा, ज्ञानाधिदेवी, बुधजननी, सर्वशास्त्रवासिनी, सर्वशास्त्राधिदेवता, पुस्तकवासिनी, ग्रन्थबीजरूपा, ग्रन्थकारिणी, व्याख्यास्वरूपा, व्याख्याधिष्ठातृदेवता, भ्रमसिद्धान्तरूपा, विषयज्ञानरूपा, सर्वसंगीतसंधानतालकारणरूपिणी, वीणापुस्तकधारिणी[७]।

स्कन्द पुराण—श्रुति, कला[८]।
पद्म पुराण—त्रयी विद्या[९]।
वामन पुराण—वेदारणि[१०]।
प्राधानिक रहस्य-विद्या-महाविद्या, त्रयी, वेदगर्भा।

(घ) सृष्टि सम्बन्धीः—

ब्रह्मवैवर्त पुराण—जगन्माता, जगदम्बिका, सदम्बिका, शक्तिरूपिणी[११]।
मत्स्य पुराण—शतरूपा।

---

[१] २-४ व ५।
[२] ६६-११ तथा ५-१।
[३] १०१-११।
[४] २-४ व ५।
[५] ६-४६।
[६] ५-२८-११६।११७।
[७] १-१ से ७।
[८] ६-४६, २८।
[९] ५-२७-११८।
[१०] ३२-६।
[११] २-४ व ५।

मारकण्डेय पुराण—जगद्धात्री[१]।
स्कन्द पुराण—सर्वभूतनिवासिनी, क्षिति, कृपि, वृष्टि, सिनीवाली, कुहू, राका[२]।
पद्म पुराण—सन्ध्या, रात्रि, प्रभा, भूति[३]।
वामन पुराण—सर्वलोकानां माता[४]।
वायु पुराण—विश्वरूपा, प्रकृति, गौ[५]।

(ङ) दैविक रूप सम्बन्धीः—

ब्रह्मवैवर्त पुराण—देवी, सुरेश्वरी, ब्रह्मस्वरूपा, ज्योतिरूपा, सनातनी अच्युता[६]।
मत्स्य पुराण—ब्रह्मवासिनी[७]।

स्कन्द पुराण—देवमाता, लक्ष्मी, गौरी, शिवा, ब्रह्माणी, दाक्षायणी, देवेशि, स्वधा, स्वाहा, गंगा, अदिति, सावित्री, गायत्री, विनता, कद्रू, रोहिणी, सिनीवाली, कुहू, राका[८]।

मार्कण्डेय पुराण—ब्रह्मयोनि[९]।
वायु पुराण—महेश्वरी।

(च) अन्य रूप सम्बन्धीः—

स्कन्द पुराण—कीर्ति, निद्रा, क्षुधा, पुष्टि, वपुःप्रीति, सत्य, धर्म, बला, नाडी[१०]।
प्राधानिक रहस्य—आर्या, कामधेनु।

उपर्युक्त विशेषण केवल उदाहरण मात्र होते हुए भी इस बात का स्पष्ट ज्ञान करा देते हैं कि पुराणों में देवी सरस्वती के रूप और कार्यों की क्या विचार धारा रही है तथा पुराणों ने इन्हें कितना महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है।

५—देवी सरस्वती का अन्य देवी—देवताओं से सम्बन्ध :—

देवी सरस्वती के वैदिक देवियों—भारती और इला-से सम्बन्ध के बारे में पहिले ही उल्लेख हो चुका है[१]। पुराणों में भी इनका सम्बन्ध कुछ महत्वपूर्ण देवी—देवताओं से वर्णित है, जैसे ब्रह्मा, शिव, शतरूपा, सावित्री गायत्री, श्री, गन्धर्व और देव, सोम, धर्म इत्यादि। संक्षेप में इनका विवरण इस प्रकार है:—

(क) सरस्वती और ब्रह्मा का सम्बन्ध :—

पुराणों में सरस्वती और ब्रह्मा का सम्बन्ध तीन रूपों में प्रदर्शित है।

(अ) ब्रह्मा की कुमारी कन्या

---

[१] २३-३०।
[२] ६-४६ (६-४६-२७)
[३] ५-२७, ११७।
[४] ३२-६।
[५] १-२३-५०।
[६] २-१ से ७।
[७] ६६-११।
[८] ६-४५-२७ ७-३४-३६, ७-३५-१०३, ६-४६।
[९] २३-३०।
[१०] ६-४६।

(ब) ब्रह्मा की पत्नी

(स) ब्रह्मा के मुख में वास करने वाली (अलंकारिक अर्थ में)।

मत्स्य और भागवत पुराणों में सरस्वती ब्रह्मा की पुत्री और पत्नी दोनो रूपों में वर्णित हैं। कुछ पुराणों में जैसे ब्रह्म पुराण, पद्मपुराण और स्कन्द पुराण में इन्हें केवल ब्रह्मा की कुमारी कन्या ही के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसी तरह कुछ पुराणों में, जैसे ब्रह्म वैवर्त पुराण और देवी-भागवत पुराण में इन्हें केवल ब्रह्मा की पत्नी के रूप में प्रदर्शित किया गया है। ब्रह्माण्ड पुराण में इन्हें "ब्रह्मसुता" अर्थात् ब्रह्मा की कन्या कहा गया है, किन्तु इसी पुराण के ललितोपाख्यान में देवी महालक्ष्मी द्वारा उन्हें ब्रह्मा की पत्नी के रूप में जोड़ा गया है।

सरस्वती को ब्रह्मा की पत्नी के रूप में वर्णन करते हुए मत्स्य पुराण में यह उल्लेख है कि ब्रह्मा ने अपने शरीर से उत्पन्न हुए पुत्री सरस्वती को जब देखा तो उनका हृदय देवी की अपार सुन्दरता देखकर अत्यधिक आकर्षित हुआ और सरस्वती की अनिच्छा के बावजूद भी ब्रह्मा ने उन्हें पत्नी बना लिया और कमल-मन्दिर में उनके साथ सौ दिव्य वर्षों तक विहार किया तथा इस सम्बन्ध से "स्वायंभू मनु" का जन्म हुआ[1]। सरस्वती के लिए प्रयुक्त "ब्रह्माणी"[2] शब्द भी इस पौराणिक कथा की पुष्टि करता है। निश्चय ही अपनी पुत्री से इस अनुचित संबंध के बीज ऋग्वेद के उन काल्पनिक वर्णनों में हैं[3] जहाँ पिता पुत्री का संबंध दिखाया गया है। उत्तर वैदिक काल में शतपथ ब्राह्मण और ऐतरेय ब्राह्मण में यह और अधिक विकसित होता है, जिसमें प्रजापति को अपनी पुत्री उषा के साथ इस अनुचित सम्बंध के कारण देवताओं द्वारा रुद्र के हाथों दण्डित होते दिखाया गया है[4]। यही कथा बाद में दक्षयज्ञ की कथा और पीठों की काल्पना की उत्पत्ति का आधार बनी[5]। चूंकि ब्रह्मा वैदिक प्रजापति के ही उत्तराधिकारी बने, पिता-पुत्री के अनुचित संबन्ध वाली कथा उनके साथ जोड़कर विष्णु-शिव आदि लोकप्रिय देवों की तुलना में उनकी हीनता और उनके उपहास की सामग्री बनी। ब्रह्मा का यह रूप मत्स्य पुराण के अतिरिक्त, भागवत आदि अन्य पुराणों में भी है।

---

[1] मत्स्य पुराण—३-३३ इत्यादि

दृष्ट्वा तां व्यथितस्तावत् कामबाणार्दितो विभुः।
अहो रूपमहो रूपमिति चाह प्रजापतिः ॥३३॥
अहो रूपमहो रूपमिति प्राह पुनः पुनः ॥
ततः प्रणामनम्रा तां पुनरवाभ्यलोकयत् ॥३५॥
सृष्ट्यर्थं यत्कृत तेन तपः परमदारुणम् ॥३९ उ० ॥
तत्सर्वं नाशमगमत् स्वसुतोपगमेच्छया ॥४० पू० ॥
उपयेमे स विश्वात्मा शतरूपामनिन्दिताम्।
सबभूव तथा सायंमतिकामातुरो विभुः। लज्जां चक्रमे देवः कमलोदरमन्दिरे ॥४३॥
यावदब्दशतं दिव्यं यथाऽन्यः प्राकृतो जनः। ततः कालेन महता तस्याः पुत्रो भवन्मनुः ॥४४॥
स्वायंभुव इति ख्यातः स विराडिति नः श्रुतम् ॥४५ पू० ॥

[2] म० पु० ३-३२। तथा स्क० पु० ६-४६।

[3] ऋ० वे० १०-६१-५ से ७ तथा १-७१-५।

[4] श० ब्रा० १-७-४-१। ऐ० ब्रा० ३-३३।

[5] Sarcar, D. C.—The śākta Pithas (pp.5-7)

इस सम्बन्ध के विषय में ब्रह्म वैवर्त पुराण में एक भिन्न कथा है, जिसके अनुसार सरस्वती श्री कृष्ण की शक्ति की जिह्वा से उत्पन्न हुई थीं और श्रीकृष्ण ने उन्हें नारायण को (जो श्रीकृष्ण का ही चतुर्भुज रूप है) उनकी पत्नी के रूप में दे दिया। 'नारायण" की 'गंगा' नामक एक अन्य पत्नी भी थीं। एकबार सरस्वती और गंगा में कुछ वैमनस्य हो जाने के कारण नारायण ने दोनों को अपने पास से अलग कर दिया तथा सरस्वती ब्रह्मा को और गंगा शिव को दे दी[1]। इसके अतिरिक्त प्राधानिक रहस्य के ललितोपाख्यान में उल्लिखित महालक्ष्मी द्वारा सरस्वती को ब्रह्मा की पत्नी के रूप में दिये जाने का विवरण पहिले ही किया जा चुका है[2]।

ब्रह्मा के मुख में वास करने वाली सरस्वती का स्वरूप भी कई पुराणों में मिलता है। यद्यपि यह केवल लाक्षणिक अर्थ में ही है। पद्म पुराण में विष्णु ने सावित्री की प्रशंसा करते हुए उन्हें ब्रह्मा के मुख में वास करने वाली सरस्वती कहा है[3]। मत्स्य पुराण में गौरी का भी प्रशंसा इन्हीं शब्दों में की गई है[4]। ये सब परोक्ष रूप से यही कहते हैं कि सरस्वती ब्रह्मा के मुख में निवास करती थीं। प्रत्यक्ष रूप में देवी के इस स्वरूप का वर्णन सरस्वती रहस्योपनिषद् में मिलता है, जहां इनकी प्रार्थना "चतुर्मुखाम्भोजवनहंसवधूर्मम। मानसे रमतां नित्यं सर्वशुक्ला सरस्वती ॥" द्वारा की गई है।

(ख) सरस्वती और विष्णु का सम्बन्ध :—

ब्रह्मा की तरह पुराणों में सरस्वती को विष्णु की भी पुत्री, पत्नी तथा जिह्वा पर वास करने वाली कहा कहा गया है। ब्रह्म वैवर्त पुराण[5] और देवी भागवत पुराण[6] के अनुसार सरस्वती पहिले नारायण (अर्थात् विष्णु) की पत्नी थी सरस्वती का विष्णु के साथ पति-पत्नी का सम्बन्ध अन्य पुराणों में कम ही मिलता है।

सरस्वती का विष्णु की पुत्री के रूप में स्पष्ट प्रदर्शन तो नहीं मिलता किन्तु परोक्ष रूप से इसके संकेत हैं। स्कन्द पुराण में विष्णु इनकी उत्पत्ति के कारण कहे गये हैं[7]। दूसरे, ऋग्वेद में इन्हें "पावीरवन," अर्थात् इन्द्र से सम्बन्धित कुमारी कन्या--"पावीरवी कन्या"--कहा गया है। वामन अवतार में विष्णु ने "अदिति" से जन्म ग्रहण किया था, जो इन्द्र की माता है। इसलिए पुराणों में विष्णु को "उपेन्द्र" अर्थात् इन्द्र का छोटा भाई कहा है तथा इसी कारण सरस्वती भी विष्णु की कन्या मानी गई है।

सरस्वती का विष्णु की जिह्वा पर वास करने वाला स्वरूप वेदों में कहीं नहीं मिलता। इसका प्रारम्भ महाकाव्यों से ही होता है और पुराणों में अधिक लोक प्रियता प्राप्त करता है। मत्स्य पुराण का कथन है कि वामन अवतार में "वामन देवता" की वाणी "सत्य" थी और सरस्वती उनकी जिह्वा थीं[8]। वामन पुराण

---

[1] ब्र० वै० पु० २-२-५४, २-६-५३ ("ब्रह्मणः कामिनी भव")

[2] प्रा० र०—"ब्रह्मणो प्रददौ पत्नीं महालक्ष्मीपुनस्त्रयीम्"

[3] प० पु० ५-१७-२१६ ('ब्रह्मास्ये तु सरस्वती')

[4] म० पु०—१३-५२ ("ब्रह्मास्येषु सरस्वती")

[5] ब्रह्मवै० पु० २-६।

[6] दे० भा० पु०—९-६।

[7] स्क० पु० ७-३३-९६ "तेनैवमुक्ता सा देवी वाडवेनाग्निना तदा।
सस्मार कारणात्मानं विष्णुं कमललोचनम् ॥"

[8] म० पु०—"सत्यं तस्यामवद् वाणी जिह्वादेवी सरस्वती।" (२४६-५७)

में तो इन्हें स्पष्ट रूप से विष्णु की जिह्वा कहा है[१]। इसी तरह ब्रह्म पुराण में भी कहा है कि विष्णु अपने मुख में सरस्वती लिए रहते हैं[२]।

(ग) सरस्वती और शिव का सम्बन्ध :—

यह पहले ही लिखा जा चुका है कि महालक्ष्मी द्वारा उत्पन्न किये गये तीन अण्डों में से एक से सरस्वती शिव के साथ निकली थीं और प्राधानिक रहस्य के अनुसार देवी महाकाली द्वारा सरस्वती की उत्पत्ति शिव के साथ हुई थी। ये दोनों विचारधारायें तंत्रों से ली गई प्रतीत होती हैं, क्योंकि ये दोनों कृतियाँ तांत्रिक ढंग की हैं। किन्तु ऋग्वेद में इन्हें "मरुत्वती" कहा है और "मरुतसखा" भी। साथ ही ऋग्वेद में मरुतों को रुद्र का पुत्र भी कहा है[३]। इसके अतिरिक्त ब्राह्मणों[४] और उपनिषदों[५] में "प्राण" को "रुद्र" का ही रूप कहा है। लिंगपुराण[६] में भी "प्राण" का रुद्र कह कर ही परिचय दिया गया है। यदि इस तरह देखा जाय तो सरस्वती का शिव से सम्बन्ध ऋग्वेद काल से ही माना जा सकता है।

सरस्वती और शतरूपा का सम्बन्ध :—

वायुपुराण में सरस्वती को "विश्वरूपा" अर्थात् अपने अन्दर सब रूपों को धारण करने वाली कहा गया है[७]। शतरूपा भी विश्व की मूल प्रमुख देवी हैं, जिनके अन्दर असंख्य रूप निहित हैं और जिन्हें मत्स्य पुराण में शतेन्द्रियाँ भी कहा है[८]। विश्वरूपा रूपी सरस्वाती को "प्रकृति गौ" या सृष्टि का मूल "जगद्योनि" भी कहा है। इसी तरह पद्म पुराण में शतरूपा को ऋषियों, प्रजापतियों, मनुओं और स्वायंभुवों की उत्पत्ति करने वाली कहा है[९]। पद्म पुराण में शतरूपा को सावित्री भी कहा गया है[१०] और मत्स्य पुराण में शतरूपा का सावित्री और सरस्वती दोनों ही कह कर परिचय दिया गया है[११]। इस प्रकार सावित्री और सरस्वती दोनों रूपों में प्रदर्शित शतरूपा पद्म पुराण और मत्स्य पुराण में ब्रह्मा की पत्नी[१२] तथा स्वायम्भू मनु की माता[१३] भी कही गई हैं।

---

[१] वा० पु०—"विष्णोर्जिह्वा सरस्वती" (३२-२३)

[२] ब्र० पु०—"बिभ्रत्सरस्वतीं वक्त्रे" (१२२-७१)

[३] ऋ० वे०—"युवा पिता स्वपा रुद्र एषां सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः। (५-६०-५)

[४] श० ब्रा०—"कतमे रुद्राऽइति, दशेमे पुरुषे प्राणाऽआत्मैकादशः (११-६-३-७)

[५] छा० उ०—"प्राणा वाव रुद्रा" (३-१६-३)

[६] लि० पु०—"ये रुद्रास्ते खलु प्राणा ये प्राणास्ते तदात्मकाः (१-२२-२४)

[७] वायु० पु०—१-२२-३४।

[८] म० पु०—४-२४।

[९] प० पु०—५-१६-११।

[१०] प० पु०—"शतरूपा च या नारी सावित्री सा त्विहोच्यते" ५-१६-१०।

[११] म० पु०—३-३१।

[१२] प० पु० ५-१६-११।
म० पु० ३-४३।

[१३] प० पु० "स्वायम्भुवादींश्च मनून् सावित्री समजीजनत्" ५-१६-१२।
म० पु० "जननी या मनोर्देवी शतरूपा शतेन्द्रिया" ४-२४।

किन्तु पद्म पुराण में ही[१] अन्यत्र, तथा कई अन्य पुराणों[२] में शतरूपा को स्वायम्भू मनु की पत्नी भी कहा है, जिनसे प्रियव्रत और उत्तानपाद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे।

ब्रह्म पुराण[३], वायुपुराण[४], लिंग पुराण[५] इत्यादि में शतरूपा को "अयोनिजा" कहा है। वायु पुराण[६] में इन्हें भूतधात्री भी कहा है। ब्रह्मा के शरीर से उत्पन्न होने के कारण सरस्वती भी आयोनिजा कही जाती हैं इन्हें भी प्रकृति-गौ के रूप में सर्वभूताधार कहा गया है।

(ङ) सरस्वती, सावित्री और गायत्री का सम्बन्ध

पुराणों में इन तीनों देवियों का सम्बन्ध बहुधा तीन प्रकार से मिलता है।

(अ) मत्स्य पुराण में कहा है कि सरस्वती, सावित्री और गायत्री तीनों देवियाँ ब्रह्मा के शरीर से उत्पन्न हुई (देह संभूता) पुत्री के ही विविध नाम हैं[७]। इसी तरह मत्स्यपुराण में सरस्वती-व्रत में और पद्मपुराण में भी "गायत्री" सरस्वती का ही दूसरा नाम कहा गया है[८]। स्कन्द पुराण के सरस्वती स्तोत्र में भी गायत्री और सावित्री दोनों ही सरस्वती के पर्यायवाची रूप में वर्णित हैं[९]।

(ब) पुराणों ने सरस्वती, सावित्री और गायत्री तीनों को विलग-विलग रूपों में भी प्रदर्शित किया है। ब्रह्म पुराण में इन्हें ब्रह्मा की पाँच पुत्रियों में से तीन पुत्रियाँ कहा है[१०]। पद्म पुराण[११] तथा स्कन्द[१२] पुराण में गायत्री और सावित्री को सरस्वती की दो सहेलियों के रूप में दिखाया गया है। अन्यत्र पद्म पुराण में सरस्वती को ब्रह्मा की कुमारी कन्या और सावित्री तथा गायत्री को ब्रह्मा की दो पत्नियाँ लिखा है[१३]।

(स) इसका उल्लेख पहिले ही किया जा चुका है कि सरस्वती ज्ञान की अधिष्ठात्री देवी (ज्ञानाधि-देवता) और सब प्रकार की विद्याओं की प्रतीक (सर्वविद्यास्वरूपा) कही जाती हैं। इसी तरह पद्म पुराण[१४] में और ब्रह्म पुराण में क्रमशः गायत्री और सावित्री को भी सब वेदों की जननी कहा गया है। इससे यह सिद्ध होता ह कि वैदिक काल की तीन देवियों इला, भारती, सरस्वती की तरह पौराणिक तीनों देवियाँ गायत्री, सावित्री, सरस्वती भी ज्ञान से सम्बन्धित हैं।

---

[१] प० पु० ५-३-१६९।

[२] भा० पु० ३-१२-५३, दे० भा० पु०—९-१-१२७, ब्र० वै० पु० २-१-१२६, वि० पु० १-७-१५।१६ वायु० पु० १-१०-७ इत्यादि।

[३] ब्रह्म० पु० २-१।

[४] वायु० पु० १-१०-१२।

[५] लिं० पु० १-५-१६।

[६] वायु० पु० १-१०-८।

[७] म० पु०—अध्याय ३ व ४।

[८] म० पु०—अध्याय ६६।

[९] स्क० पु० ६-४६।

[१०] ब्र० पु०—सावित्री चैव गायत्री श्रद्धा मेधा सरस्वती। एता मम सुता ज्येष्ठा धर्मसंस्थानहेतवः॥ (१०२-२, ३)

[११] प० पु० —५-१८-१८५।१८६ इत्यादि।

[१२] स्क० पु०—७-३३-३९।

[१३] प० पु० (१) "कुमारी तनया" (५-१८-१६५)
(२) "सावित्रीपतये देव गायत्रीपतये नमः" (५-१५-११८)

[१४] "देव माता" (१७-३०८, ३०९)

(च) सरस्वती और श्री अथवा लक्ष्मी का सम्बन्ध

ये दोनों देवियाँ मनुष्य के जीवन के सम्पूर्ण क्षेत्र में विद्यमान हैं। सरस्वती बौद्धिक, चारित्रिक और आध्यात्मिक प्रगति (दूसरे शब्दों में "मुक्ति") की प्रतीक हैं और लक्ष्मी शारीरिक तथा भौतिक प्रगति (दूसरे शब्दों में "भुक्ति") की प्रतीक हैं। मनुष्य के अस्तित्व का उत्तम विकास बहुत कुछ इन दो मुख्य देवी सिद्धान्तों के परस्पर समन्वय और घनिष्ठ सम्बन्ध पर निर्भर है। मनुष्य के जीवन में जितना ही अधिक संतुलन सरस्वती और लक्ष्मी (दूसरे शब्दों में मुक्ति और भुक्ति अथवा ज्ञान और भोग) का होगा उतना ही अधिक पूर्णता की ओर उसका विकास होगा। पुराणों ने इस सत्य को मूल रूप से अपनाया है। ब्रह्मवैवर्त पुराण में सरस्वती और लक्ष्मी को विष्णु की दो पत्नियों के रूप में दिखाया गया है, जो आपस में पूर्ण एकता व समन्वय का परिचय देती हैं[१]। ऐसा ही उल्लेख देवी भागवत पुराण में भी आता है। ब्रह्मवैवर्त पुराण में अन्यत्र यह भी लिखा है कि विष्णु के मुख में सरस्वती तथा हृदय में लक्ष्मी का वास है जिसके कारण वे सर्वज्ञ और लक्ष्मीवान् कहे जाते हैं[२]। पुरुषोत्तम तथा पूर्ण होने के लिए यही दो प्रमुख गुण आवश्यक हैं।

इसके अतिरिक्त भी पुराणों में सरस्वती और लक्ष्मी का इतना घनिष्ठ सम्बन्ध प्रदर्शित है कि कभी कभी तो एक का प्रयोग ही दूसरे का परिचय देता है। मत्स्यपुराण[३] और पद्मपुराण[४] में लक्ष्मी को सरस्वती के आठ रूपों में से एक कहा है। सरस्वती स्तोत्र[५] और स्कन्द[६] पुराण में भी लक्ष्मी को सरस्वती का पर्यायवाची कहा है। इसी तरह विष्णु पुराण के लक्ष्मी स्तोत्र में "सरस्वती" लक्ष्मी के एक स्वरूप के रूप में वर्णित है[७]। कुछ श्लोक पद्म पुराण[८] के सरस्वती-स्तोत्र और विष्णु पुराण[९] के लक्ष्मी स्तोत्र में दोनों देवियों– सरस्वती और लक्ष्मी - के लिए ऐसे मिलते हैं, जहाँ लगभग एक से ही विशेषण दोन के लिए प्रयुक्त हुए हैं।

---

[१] ब्र० वै० पु०—२-६-१७।
"लक्ष्मीः सरस्वती गंगा तिस्रो भार्या हरेरपि।
प्रेम्णा समस्तास्तिष्ठन्ति सततं हरिसन्निधौ॥"

[२] १२२-७१, ७२।
"बिभ्रत्सरस्वतीं वक्त्रे सर्वज्ञोऽसि नमोऽस्तु ते।
लक्ष्मीवानस्यतो लक्ष्मीं बिभ्रद्वक्षसि चानघ॥"

[३] म० पु० ६६-९। [४] प० पु० ५-२२-१८४। [५] प० पु० ५-२७-११६, ११७।

[६] स्क० पु०६-४६-२२ इत्यादि। [७] वि० पु०—१-९-११७। [८] प० पु०—५-२७-११७–११८।
"देवा ऊचुः—"त्वं सिद्धिस्त्वं स्वधा स्वाहा त्वं पवित्रं मतं महत्।
संध्या रात्रिः प्रभा भूतिर्मेधा श्रद्धा सरस्वती॥ ११७॥
यज्ञविद्या महाविद्या गुह्यविद्या च शोभना।
आन्वीक्षिकी त्रयीविद्या दण्डनीतिश्च कथ्यते॥ ११८॥"

[९] वि० पु०—१-९-११७ से ११९।
इन्द्रकृता लक्ष्मीस्तुतिः "त्वं सिद्धिस्त्वं सुधा स्वाहा स्वधा त्वं लोकपावनि।
संध्या रात्रिः प्रभा भूतिर्मेधा श्रद्धा सरस्वती॥ ११७॥
यज्ञविद्या महाविद्या गुह्यविद्या च शोभने।
आत्मविद्या च देवि त्वं विमुक्तिफलदायिनी॥ ११८॥
आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिस्त्वमेव च॥ ११९ पू०॥

ऋग्वेद में भी लक्ष्मी का कुछ सम्बन्ध "वाक्" से मिलता है। यद्यपि उस समय तक लक्ष्मी का देवी स्वरूप स्पष्ट नहीं हुआ था और इस शब्द का प्रयोग प्रायः शक्ति, विजय और कुशलता जैसे सद्गुणों के लिए हुआ है[१]। फिर भी इससे इस सम्बन्ध के वाद के विकास का कुछ संकेत मिलता है।

(छ) सरस्वती और गंधर्वों का सम्बन्ध

ब्रह्माण्ड पुराण में गंधर्वों को देवताओं का संगीतज्ञ कहा गया है।[२] इसी तरह सरस्वती को (जो अपने हाथों में वीणा धारण किये रहती है) ब्रह्म वैवर्त पुराण में संगीत की देवी कहा है[३]।

(ज) सरस्वती और देवों का सम्बन्ध

जिस प्रकार सरस्वती वाक् की देवी हैं (वाग्देवता) उसी प्रकार देवों को "गीर्वाणाः" कहा है। इसके अतिरिक्त वाजसनेयि संहिता में सरस्वती को वाक् द्वारा देवताओं की चिकित्सा से भी सम्बन्धित किया है[४]। इस दृष्टि से वाजसनेयि संहिता का यह संदर्भ महत्वपूर्ण है, जहाँ सरस्वती को अपनी मधुरवाणी से इन्द्र में शक्ति संचार करते हुए प्रदर्शित किया गया है।

(झ) सरस्वती और सोम का सम्बन्ध

जिस तरह सरस्वती ज्ञान की प्रतीक हैं, उसी तरह "सोम" कर्म अथवा कर्म द्वारा किये गये भोग का प्रतीक कहा जा सकता है। अतः सरस्वती और सोम का सम्बन्ध विशेष नहीं तो कम से कम निकटता का अवश्य ही कहा जा सकता है। ब्राह्मणों और पुराणों से भी इसका समर्थन प्राप्त होता है। इनके इस सम्बन्ध के विषय में ब्रह्म पुराण[५] और शतपथ[६] ब्राह्मण में उल्लिखित रोचक घटनाएँ इस प्रकार हैं।

(१) देवताओं को शक्ति और स्फूर्ति प्रदान करने वाला (देवानां प्राणदः) सोम पहिले गंधर्वों के पास था। देवता गण इसकी प्राप्ति के लिये अति उत्सुक थे और इसलिए उन्होंने ब्रह्मा से परामर्श किया। उस समय देवी सरस्वती ने (जो ब्रह्मा के पार्श्व में बैठी थीं) यह सम्मति दी कि देवता लोग सोम को गधर्वों से उनके बदले में खरीद लें। उन्होंने यह भी कहा कि गंधर्व लोग इसके लिए शीघ्र ही तैय्यार हो जायेंगे, क्योंकि वे सदैव ही स्त्रियों के लिए लालायित रहते हैं (स्त्रीप्रिया नित्यं, स्त्रीषु कामुकाः)। किन्तु उत्तर में देवताओं ने कहा कि उन्हें सरस्वती और सोम दोनों ही की आवश्यकता है। इसपर सरस्वती ने देवताओं को यह समझाया कि उनका मतलब यह है कि पहले उनको सोम से बदल लिया जाय और फिर बाद में वे किसी

---

[१] ऋ० वे०—"सक्तुमिव तितउना पुनन्तो—भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधिवाचि" (१०-७१-२)

[२] ब्रह्माण्ड पु० — ४-२०-१०१—

"विश्वावसुप्रभृतयो गन्धर्वाः सुरगायकाः।
तुम्बुरुर्नारदश्चैव साक्षादेव सरस्वती॥
जयमंगलपाठानि पठन्तः पटुगीतिभिः।

[३] ब्र० वै० पु०—"सर्वसंगीतसंधानतालकारणरूपिणी" (२-१-३३)

[४] वा० स० "देवा यज्ञमतन्वत भेषजं भिषजाश्विना।
वाचा सरस्वती भिषगिन्द्रायेन्द्रियाणि दधतः॥ (१९-१२)

[५] ब्र० पु० १०५-२ से १८। [६] श० ब्रा० ३-४-१-१०।

चतुरता से गंधर्वों के यहाँ से चली आयेंगी। इस सुझाव को कार्यान्वित करने के लिए देवताओं ने एक यज्ञ का आयोजन किया और उस में भाग लेने के लिए गंधर्वों को भी आमन्त्रित किया। वहीं पर सरस्वती को सोम के बदले में प्रस्तुत किया गया। गंधर्वों ने इस आदान-प्रदान को स्वीकार किया और सोम देकर बदले में सरस्वती को अपने साथ ले गये। बाद में अपनी पूर्व योजना के अनुसार सरस्वती देवों के पास वापस चली आईं। इस प्रकार देवों को सरस्वती और सोम दोनों प्राप्त हुए और गंधर्व दोनों से ही हाथ धो बैठे (ततोऽभवद्देवतानां सोमश्चापि सरस्वती। गन्धर्वाणां नैव सोमो नैवाऽऽसीच्च सरस्वती)।

(२) शतपथ ब्राह्मण में भी लगभग इसी प्रकार का एक वृत्तांत है, जहाँ देवताओं ने सरस्वती को गंधर्वों को देकर बदले में उनसे सोम ले लिया था और फिर बाद में सरस्वती भी देवों के पास वापस चली आईं। (तेभ्यो गन्धर्वेभ्यो वाचं प्राहिण्वम् सेवात् देवान् सह सोमेनागच्छत्)।

दोनों वृत्तांतों में अन्तर केवल इतना ही है कि पहिले में "सरस्वती" को स्पष्ट रूप दिया गया है और दूसरे में "वाक्" शब्द (वाग्वे सोमक्रयणी) का प्रयोग हुआ है, जो सरस्वती का ही पर्यायवाची शब्द है।

(ञ) सरस्वती और धर्म का सम्बन्ध

साधारणतः पुराणों में सरस्वती का स्पष्ट सम्बन्ध धर्म से नहीं मिलता। "मरुत्वती" अवश्य धर्म की पत्नी के रूप में वर्णित हैं (जैसे पद्म पुराण में लिखा है, "मरुत्वती मरुत्वतो देवानजनयत् सुतान्"), किन्तु पद्म पुराण में एक स्थान पर स्पष्ट कहा गया है कि ब्रह्मा ने अपनी पुत्री सरस्वती को अपनी अन्य चार पुत्रियों के साथ, धर्म को, उनकी पत्नी के रूप में दे दिया था[१]।

६—सरस्वती का घोर स्वरूप

देवी सरस्वती के उपर्युक्त रूप के अतिरिक्त उनका एक घोर रूप भी है, जिसका वर्णन पुराणों में मिलता है। ऋग्वेद में भी सरस्वती के "घोर" और "वृत्रघ्नी" रूपों की चर्चा की गई थी। सम्भवतः पुराणों में इसी का विकसित रूप दिया गया है। वायु पुराण में सरस्वती को "महानादा" कहा है[२]। ब्रह्माण्ड पुराण के ललितोपाख्यान में सरस्वती को नौ मातृ देवियों में से एक कहा है[३]। जिससे यह अनुमान किया जा सकता है कि इनको चण्डिका, भैरवी, काली इत्यादि भय उत्पन्न करने वाली देवियों की पंक्ति में भी स्थान दिया गया था। इसका भी उल्लेख मिलता है कि जब देवी ललिता अपने महान रथ पर आरूढ़ होकर भण्डासुर दैत्य से युद्ध करने गई थीं, तब अन्य शक्तियों के साथ सरस्वती भी गई थीं तथा इस समुदाय की अन्य शक्तियों की तरह सरस्वती भी "क्रोध से रक्त वर्ण नेत्रों वाली तथा माला और चक्र से युक्त कुमारी कन्या" के रूप में वर्णित

---

[१] प० पु० —"लक्ष्मीः सरस्वती संध्या विशोषा च मता शुभा।
देवी सरस्वती चैव ब्रह्मणा निर्मिता पुरा।
एताः पंच वरिष्ठा वै सुरश्रेष्ठाश्च पार्थिव।
दत्ता धर्माय भद्रं ते ब्रह्मणा दृष्टकर्मणा॥" (५-३७-७९ इत्यादि)

[२] वायु पु० —१-२३-३४।

[३] ब्रह्माण्ड० पु० —"लक्ष्मीः सरस्वती गौरी चण्डिका त्रिपुराम्बिका।
भैरवो भैरवी काली महाशास्त्री च मातरः॥(४-७-७२)

हैं[१]। सरस्वती के इस घोर रूप से मिलती-जुलती आठ अन्य देवियों या शक्तियों का वर्णन "रहस्य योगिनियों" के नाम से मिलता है, जो सरस्वती की ही तरह वाक् की देवी (वागधीश्वरा:) बीणा और पुस्तक लिए हुए (वीणापुस्तक शोभिता:) हाथों में तीर व धनुष (बाणाकार्मुकपाणय:) और शरीर पर कवच धारण किये प्रदर्शित हैं[२]। सम्भवत: ये रहस्य योगिनियाँ घोर रूपा सरस्वती के ही विभिन्न रूप हैं।

देवी माहात्म्य के वैकृतिक[३] रहस्य में इनको गौरी अथवा दुर्गा के शरीर से उत्पन्न होने वाली, शुद्ध सत्वगुणों की प्रतीक, आठ हाथों वाली, तीर, गदा, त्रिशूल, चक्र, शंख, घंटा, हल और धनुष से सुसज्जित, शुम्भ और निशुम्भ का संहार करने वाली, भक्ति के साथ पूजा करने पर अनन्त ज्ञान देने वाली कहा गया है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि राक्षसों को मारने के लिए अथवा दूसरे शब्दों में विश्व से अन्धकार और पाप का विनाश करने के लिए जहाँ इनका घोर रूप है, वहीं अपने भक्तों को अनन्य ज्ञान का वरदान देने के लिए इनका सौम्य रूप भी प्रदर्शित है। यहाँ देवी के दो बिल्कुल विरोधी स्वरूपों का विचित्र समन्वय मिलता है।

७ सरस्वती का पार्थिव रूप

प्रारम्भ से ही इस बात पर बड़ा मतभेद रहा है कि देवी देवताओं के आकार होते हैं या नहीं। यास्क ने अपने निरुक्त में लिखा है कि एक मत के अनुसार इनके केवल दैविक रूप होते हैं तथा कुछ के मतानुसार इनके पार्थिव और दैविक रूप दोनों होते हैं, किन्तु पुराणों में अधिकांश देवताओं को पार्थिव रूप में ही प्रदर्शित किया गया है। देवी सरस्वती के भी पार्थिव रूप का वर्णन पुराणों में मिलता है। विशेष कर ब्रह्म वैवर्त पुराण, देवी भागवत पुराण में और सरस्वती रहस्य उपनिषद में भी इनकी संक्षिप्त व्याख्या इस प्रकार है :

(क) रूप

ब्रह्मवैवर्त पुराण—श्वेत रंग की (शुक्लवर्णा[४]), हिम, चन्दन, कुन्दपुष्प, चन्द्र, कुमुद और कमल के रंग

---

[१] ब्रह्माण्ड० पु० —४-१९-६९ इत्यादि। "अथचक्ररथेन्द्रस्य चतुर्थं पर्वसंश्रिता:।
ब्राह्मीमुख्यास्तु पूर्वोक्ताश्चण्डिकात्वष्ठमी परा। तत्र पर्वण्यथएताच्च लक्ष्मीश्चैव सरस्वती ॥७०॥
रति: प्रीति: कीर्ति: शान्ति:पुष्टिस्तुष्टिश्च शक्तय:। एताश्च क्रोधरक्ताक्ष्यो दैत्यं हन्तुंमहा बलम्॥७१॥
कुन्तचक्रधरा: प्रोक्ता: कुमार्य: कुंभसंभव: ॥७२ पू०॥

[२] ब्रह्माण्ड पु०—४-१९-४६ इत्यादि।
"अथ चक्ररथेन्द्रस्य तृतीयं पर्व संश्रिता:। रहस्ययोगिनीनाम्ना प्रख्याता वागधीश्वरा: ॥४६॥
रक्ताशोकप्रसूनाभा बाणकार्मुकपाणय:।
कवचच्छन्नसर्वांगयो वीणापुस्तकशोभिता: ॥४७॥"

[३] वै० र० १४—इत्यादि—
"गौरीदेहात्समुद्भूता या सत्वैकगुणाश्रया।
साक्षात्सरस्वती प्रोक्ता शुम्भासुरनिर्बर्हिणी ॥१४॥
दधौ चाष्ट भुजा बाणमुसले शूलचक्रभृत्।
शंखं घण्टां लांगलं च कार्मुकं वसुधाधिप ॥१५॥
एषा सम्पूजिता भक्त्या सर्वज्ञत्वं प्रयच्छति।
निशुम्भमथिनी देवी शुम्भासुरनिर्बर्हिणी ॥१६॥

[४] ब्र० वै० पु०—२-२-५४, २-४-४६—

से मिलती-जुलती (हिमचन्द्र[1] कुन्देन्दु कुमुदाम्भोजसन्निभा), हँसमुख और अत्यन्त आकर्षक (सस्मितां[2] सुमनोहराम्), लाखों चन्द्रमाओं की तरह भव्य और चमकवाली (कोटिचन्द्रप्रभामुष्टश्रीयुक्तविग्रहाम्[3]), सत्व गुण युक्त (शुद्धसत्वस्वरूपा[4])।

स्कन्द पुराण -शरद ऋतु के श्वेत बादलों के रंग की (शारदां[5]बुदसंकाशा)।

सरस्वती रहस्य उपनिषद्-पूर्ण श्वेत (सर्वशुक्ला), हिम, मोतियों की माला तथा कपूर की तरह कान्ति वाली (निहारहारघनसार सुधाऽऽकराऽऽमां मुक्ताहारसमायुक्ता), शंख की तरह गले वाली (कम्बुकण्ठी), ताम्र की तरह लाल होठों वाली (मुता थोष्ठी), सिर पर चन्द्र धारण किए हुए।

(ख) शरीर

स्कन्द पुराण—चार हाथों वाली (चतुर्भुजा[6])

प्राधानिक रहस्य—चार हाथों वाली

वैकृतिक रहस्य—आठ हाथों वाली

वायु पुराण प्रकृति[7] के रूप में—चार हाथों वाली (चतुर्हस्ता), चार पैरों वाली (चतुष्पादा या चतुष्पदा) चार मुखों वाली (चतुर्मुखी या चतुर्वक्त्रा) और चार आँखों वाली (चतुर्नेत्रा)।

(ग) वस्त्र और आभूषण

ब्रह्म वैवर्त पुराण—अग्नि की तरह शुद्ध वस्त्र धारण करने वाली (वह्नि[8]शुद्धांशुकाधानां), पीले वस्त्र धारण करने वाली (पीतवस्त्र[9]परिधाना), रत्नाभूषणों से सुसज्जित (रत्नभूषणभूषाढ्या[10]—[11]रत्नसारेन्द्रसचित-वरभूषणभूषिताम्)।

स्कन्द पुराण—श्वेत वस्त्र धारण करने वाली (सितां[12]वरधरा), शरीर पर श्वेत चन्दन का लेप किये हुए (सितचन्दन[13]गुण्ठिता), अति सुन्दर शुद्ध मोतियों का हार धारण किए हुए (तार[14]हार विभूषिता)।

---

[1] ब्र० वै० पु० —२-१-३६, २-५-१३—

[2] „ „ —२-४-४३।

[3] ब्र० वै० पु० —२-४-४६।

[4] „ „ —२-१-३४।

[5] स्क० पु०—७-३३-३३।

[6] स्क० पु० ६-४६-१७।

[7] वायु० पु० १-२३-४६ इत्यादि।

[8] ब्र० वै० पु० २-४-४७।

[9] वही, २-२-५५।

[10] वही।

[11] वही, २-४-४७।

[12] स्क० पु० ७।३३-३३।

[13] वही।

[14] वही।

सरस्वती रहस्य उपनिपद्--चम्पा की माला पहिने हुए (कनकचम्पकदामभूषाम्)।

(घ) आयुध, (हाथों में)

ब्रह्म वैवर्त पुराण—वीणा, पुस्तक (वीणापुस्तकधारिणी), रत्न माला द्वारा श्रीकृष्ण परमात्मा का जाप करती हुई (जपन्ती परमात्मानं श्रीकृष्णं रत्नमालया[1])।

स्कन्द पुराण-सुन्दर कमल, अमृत से भरा कमण्डलु, सर्वविद्या की प्रतीक, पुस्तक (दधती[3] दक्षिणे हस्ते कमलं सुमनोपरम्। अक्षमालां तथान्यस्मिजिततारकवर्चसम्। कमण्डलुं तथाऽन्यस्मिन् दिव्यवारिप्रपूरितम्। पुस्तकं तथा पामे सर्वविद्यासमुद्भवम्॥)

मत्स्य पुराण-वीणा, अक्षमाल, कमण्डलु व पुस्तक (—[4]वीणाक्षमणिधारिणीम्। सकमण्डलु पुस्तकाम्)।

सरस्वती रहस्य उपनिषद्—अक्ष सूत्र, अंकुश, पाश, पुस्तक (अक्षसूत्रांकुशधरा पाशपुस्तकधारिणी।)

प्राधानिक रहस्य—अक्षमाल, अंकुश, वीणा, पुस्तक (अक्षमालांकुशधरा वीणापुस्तकधारिणी)

(ङ) तनु

मत्स्य पु०—लक्ष्मी, मेधा, धरा, पुष्टि, गौरी, तुष्टि, प्रभा और मति ([5]लक्ष्मीमेधा धरातुष्टिर्गौरी तुष्टि प्रभामतिः। एताभिः पाहि चाष्टाभिस्तनुभिर्मां सरस्वति॥)

ऐसा ही उल्लेख पद्म पुराण में भी मिलता है[6]। सरस्वती रहस्य उपनिपद् में भी इनके आठ तनु बताये गए हैं जो, विभिन्न जातियों पर आधारित हैं (नामजात्यादिभिर्भेदैःरप्टधा या विकल्पिता)।

८—सरस्वती की मूर्तियां :

पुराणों में देवी सरस्वती की मूर्तियों के विपय में भी वर्णन मिलता है और प्रतिमा-निर्माण के आदेश मिलते हैं। (विस्तृत वर्णन अगले अध्याय में) ये संदर्भ इस प्रकार हैं।

स्कन्द पुराण-एक उल्लेख के अनुसार राजा अम्बुवीचि ने देवी भारती की एक मिट्टी की चतुर्भुजाकार प्रतिमा हाटकेश्वर क्षेत्र में (सम्भवतः आधुनिक बड़नगर—गुजरात) में प्रस्थापित की थी, जिसके कारण वह स्थान सरस्वती तीर्थ कहलाया—

ततस्तूर्णं समादाय मृत्तिकां स नदीतटात्।
चकार भारतीं देवीं स्वयमेव चतुर्भुजाम्[7]॥

---

[1] ब्र० वै० पु० २-१-३४, २-२-५५।
[2] „ „ २-१-३५।
[3] स्क० पु०—६-४६-१८।
[4] म० पु० ६६-९।
[5] म० पु०—६६-९।
[6] प० पु० ५-२२-१८४।
[7] स्क० पु० ६-४६-१७।

दूसरे उल्लेख[१] के अनुसार देवी सरस्वती ने वडवानल को लिए हुए स्वयं अपने को प्रभास (सोमेश्वर के दक्षिण-पूर्व) में स्थापित किया था और इसी कारण इसका नाम अग्नितीर्थ पड़ा। यहाँ "वडवानल धारिणी प्रतिमा" की पूजा का आदेश भी है।

तीसरे उल्लेख के अनुसार सरस्वती ने वडवानल को सागर में डालने के पहिले पूजा हेतु भैरवेश्वर लिंग की स्थापना की थी। फिर उसी के दक्षिण पश्चिम समुद्र तट पर स्वयं को मूर्ति रूप में स्थापित किया।

इत्युक्ता तु तदा देवी भैरवेश्वरनैर्ऋतिः।
सागरस्य स्थिता रम्ये तत्र मूर्तिमती सती[२]॥

वामन पुराण के अनुसार भगवान् स्थाणु (शिव) ने स्वयं सरस्वती को लिंग रूप में स्थापित किया था, जिसके कारण उस स्थान का नाम स्थाणुतीर्थ पड़ा।

"स्थापयामास देवेशो लिंगाकारां सरस्वतीम्"[३]

कुछ पुराणों में प्रतिमा निर्माण के बारे में विशेष निर्देश भी मिलते हैं। उदाहरणार्थ अग्नि पुराण के अनुसार ब्रह्मा की मूर्ति के बाईं ओर सावित्री और दाईं ओर सरस्वती होनी चाहिये (आध्यस्थाली सरस्वती वाम-दक्षिणे[४]) तथा देवी के हाथों में पुस्तक, अक्षमाल और वीणा होनी चाहिये। (पुस्ताक्षमालिकाहस्ता वीणाहस्ता सरस्वती[५])। मत्स्य पुराण के अनुसार भी ब्रह्मा की मूर्ति के बाईं ओर सावित्री और दाईं ओर सरस्वती होनी चाहिये (आज्यास्थालीं न्यसेत्पार्श्वे वेदांश्च चतुरः पुनः। वामपदर्श्वेऽस्य सावित्रीं दक्षिणे च सरस्वतीम्[६]) ब्रह्म वैवर्त पुराण में यह भी लिखा है कि मूर्ति के अभाव में प्रतीकात्मक रूप में जल से भरा कलश और पुस्तक रख कर देवी सरस्वती की पूजा की जाती है[७]।

यहाँ यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि पुराणों में सरस्वती के निजी वाहन का वर्णन स्पष्ट रूप से प्रायः नहीं मिलता। कहीं-कहीं इनका वाहन हंस इसलिए कहा है कि ब्रह्मा का वाहन हंस है और ब्रह्माणी होने के कारण उनका वाहन भी हंस ही होना चाहिये (ब्रह्माणी ब्रह्मसदृशी—हंसाविरुढ़ा कर्त्तव्या—[८])

---

[१] स्क० पु० (७-३४-३२।
'सोमेशाद् दक्षिणाग्नये सागरस्य समीपतः।
संस्थितास्तु महादेवी वडवानलधारिणी॥
स्नात्वाऽग्नितीर्थे पूर्वं तां पूजयेद्विधिना नरः॥"

[२] स्कं० पु० ७-४१-७।

[३] वा० पु० ४०-४।

[४] अ० पु० ४९-१५।

[५] अ० पु० ५०-१६।

[६] म० पु० २६०-४४।

[७] ब्र० वै० पु०—प्रतिविश्वेषु ते पूजां महतीं ते मुदान्विताः।
माघस्य शुक्लपंचम्यां विचारम्भेषु सुन्दरि॥
मद्वरेण करिष्यन्ति कल्पे कल्पे यथाविधि।
जितेन्द्रियाः संयताश्च घटे च पुस्तकेऽपि च॥ (२-४-२३ इत्यादि)

[८] म० पु० २६१-२४।

९—सरस्वती की पूजा और उसका प्रतिदान

इसमें कोई संदेह नहीं है कि अपने विविध आत्माओं और कथाओं द्वारा पुराणों का प्रमुख उद्देश्य सदैव यही रहा है कि मनुष्य के हृदय में देवी देवताओं के प्रति भक्ति-भावना और आध्यात्मिक विचारों को प्रेरणा मिले। पुराणों की दृष्टि में समस्याओं की आध्यात्मिक ओर भावात्मक पृष्ठभूमि के बिना केवल बौद्धिक और सूचनात्मक अध्ययन बिलकुल व्यर्थ है। इसी कारण प्रमुख राज कुलों का ऐतिहासिक वर्णन करते समय भी पुराणों ने उनसे सम्बन्धित केवल सूचनात्मक विवरण ही नहीं, अपितु साथ-साथ उनकी आध्यात्मिक उन्नति को भी बताया है। अतः यह आवश्यक प्रतीत होता है कि संक्षेप में पुराणों में सरस्वती के प्रति प्रकट भक्ति भाव का भी विवरण दिया जाय।

पुराणों के अनुसार सरस्वती—पूजा सर्वप्रथम सर्वोच्च तीन देवताओं—ब्रह्मा, विष्णु, महेश—द्वारा की गई थी जो इनके महत्व का भी स्पष्ट परिचय देता है। ब्रह्म वैवर्त पुराण के अनुसार सरस्वती की पूजा पहिले ब्रह्मा के द्वारा और फिर तीनों लोकों में सब देवताओं, ऋषियों तथा अन्य लोगों द्वारा हुई[१]। ऐसा ही उल्लेख देवी भागवत पुराण में भी है[२]। ब्रह्म पुराण में अन्यत्र यह भी उल्लिखित है कि सरस्वती पूजा का विधान श्री कृष्ण द्वारा हुआ, जिन्होंने स्वयं सब देवों द्वारा पूजित होते हुए भी सरस्वती की पूजा की और उसके बाद ब्रह्मा, विष्णु, महेश, अनन्त, धर्म, सनकादि तथा अन्य ऋषियों, सब देवताओं, मनुष्यों द्वारा उनकी पूजा हुई[३]।

देवी सरस्वती का सामान्य पूजन तो सदैव ही किया जा सकता है, किन्तु पुराणों में उनके पूजन के लिए कुछ विशेष अवसरों और पर्वों के भी उल्लेख हैं, जैसे :—

ब्रह्मवैवर्त पुराण[४], देवी भागवत पुराण } (१) माघ मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी
(२) शिशु के विचारम्भ के दिन

स्कन्द पुराण[५]—(१) सरस्वती—तीर्थ में स्थापित मूर्ति की पूजा के लिए प्रत्येक अष्टमी और चतुर्दशी।

---

[१] ब्र० वै० पु०—"आदौ सरस्वती देवी ब्रह्मणा परिपूजिता।
तत्पश्चात् त्रिषु लोकेषु देवता मुनिमानवैः॥" (२-१-१५१)

[२] दे० भा० पु० ९-१-१५१, १५२।

[३] ब्र० वै० पु०—२-४-११ इत्यादि।
"आदौ सरस्वती पूजा श्रीकृष्णेन विनिर्मिता। ११ पु०—
इत्युक्त्वा पूजयामास तां देवीं सर्वपूजितः॥ २८ उ०॥
ततस्तत्पूजनं चक्रुर्ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः।
अनन्तश्चापि धर्मश्च मुनीन्द्राः सनकादयः॥२९॥
सर्वे देवाश्च मनवो नृपाश्चमानवादयः।
बभूव पूजिता नित्या सर्वलोकैः सरस्वती॥३०॥

[४] ब्र० वै० पु०—"माघस्य शुक्लपंचम्याम्" तथा "विद्यारम्भदिनेऽपि च" (२-४-२३ व ३४)

[५] स्क० पु०—"यो मामत्र स्थितां नित्यं स्नात्वाऽत्र सलिले शुभे।
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां पूजयिष्यति मानवः॥ (६-४६-३७ व ३९)
" " पूजयेत्तां विधानेन तं तथा भैरवेश्वरम्।
महानवम्यां यत्नेन कृत्वा स्नानं विधानतः॥ (७-४१-८)

(२) भैरेश्वर लिंग के पास (प्रभास में) स्थापित मूर्ति की पूजा आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की नवमी (महानवमी) को जिस दिन भैरेश्वर लिंग की भी पूजा होती है।

अग्निपुराण[१]—ज्येष्ठ मास की तृतीया को।

पद्म पुराण[२] व मत्स्य पुराण[३] —प्रत्येक मास के दोनों पक्षों की पंचमी (सारस्वत व्रत के अंग के रूप में)

इसी प्रकार सामान्य पूजन विधियों के अतिरिक्त देवी सरस्वती के पूजन की कुछ विशेष विधियों और नियमों का वर्णन भी ब्रह्म वैवर्त[४] पुराण और देवी भागवत[५] पुराण में मिलता है। उदाहरणार्थ, इनकी पूजा के लिए श्वेत पुष्प, अक्षत (श्वेत चावल), श्वेत चन्दन, दुग्ध इत्यादि वस्तुएँ आवश्यक हैं[६]। इनकी पूजा मुख्यतः "स्तवन", "ध्यान", "कवच" व "मंत्रजाप" के रूप में होती है। इसके लिए पुराणों में बहुत से उत्तम सरस्वती स्तोत्र मिलते हैं। ब्रह्म वैवर्त पुराण में "ध्यान" इस प्रकार वर्णित है :

सरस्वतीं शुक्लवर्णां सस्मितां सुमनोहराम्।
कोटिचन्द्रप्रभामुष्टपुष्टश्रीयुक्तविग्रहाम्॥
वह्निशुद्धांशुकाधानां सस्मितां सुमनोहराम्।
रत्नासारेन्द्रखचितवरभूषणभूषिताम्॥
सुपूजितां सुरगणैर्ब्रह्मविष्णुशिवादिभिः।
वन्दे भक्त्या वन्दितां तां मुनीन्द्रमनुमानवैः[७]॥

सरस्वती कवच को "विश्वजय" भी कहा गया है[८]। इसे या तो गले में पहिना जाता है या स्वर्ण गुटिका के रूप में दाहिनी भुजा पर बाँधा जाता है। कवच की सिद्धि इसके पाँच लाख जप से होती है। इसी प्रकार आठ शब्दों वाले सरस्वती मंत्र "श्रीं ह्रीं सरस्वत्यै स्वाहा[९]" की भी पुराणों में बड़ी प्रशंसा की गई हैं। इसकी सिद्धि चार लाख जप से होती है।

---

[१] अ० पु० --आत्मतृतीया मार्गस्य प्राचर्येच्छाभोजनादिना। २७ उ०॥
गौरी काली उमा भद्रा दुर्गा कान्तिः सरस्वती।
वैष्णवी लक्ष्मीः प्रकृतिः शिवा नारायणी क्रमात्॥
मार्गतृतीयामारम्य सौभाग्यं स्वर्गमाप्नुयात्॥२८॥ (१७८-२७ व २८)

[२] प० पु०—५-२२-१८६ व [३] म० पु०—६६-११ — "पंचम्यां प्रतिपक्षं च पूजयेद् ब्रह्मवासिनीम्।" (प० पु० में "पूज्येच्छब्दवासिनीम्" है)।

[४] ब्र० वै० पु०—२-४।

[५] दे० भा० पु०—९-४।

[६] ब्र० वै० पु० २-४-३९।

[७] ब्र० वै० पु० २-४-४६ से ४८।

[८] ब्र० वै० पु० २-४-६१ इत्यादि।

[९] ब्र० वै० पु० २-४-५२ इत्यादि।

देवी की पूजा के नियमों का भी वर्णन पुराणों में मिलता है। ब्रह्म वैवर्त पुराण के अनुसार इनकी पूजा नित्य कर्म तथा स्नान के पश्चात् करनी चाहिए "(स्नात्वा नित्यक्रिया कृत्वा)"। शारीरिक और मानसिक शुद्धता "(शुचिः)" तथा अपनी इन्द्रियों को पूर्ण वश में होना चाहिए और निरन्तर संयम का पालन करना चाहिए। मत्स्य पुराण और पद्म पुराण के अनुसार सारस्वत व्रत करने वाले को प्रातः काल व सायंकाल मौन रहना चाहिए, ("सन्ध्यायां च तथा मौनमेतत्कुर्वन् समाचरेत्"), दोनों बार भोजन करते समय भी मौन रहना चाहिए (मौनव्रतेन भुंजीत सायं प्रातस्तु धर्मवित्)' और इसके अतिरिक्त कुछ भी न खाना चाहिए ("नान्तरा भोजनं कुर्यात्')। इन नियमों के विश्लेषण से एक बात स्पष्ट होती है कि सरस्वती की पूजा के सम्बन्ध में वाक् और स्वाद पर नियन्त्रण अनिवार्य है, क्योंकि यही दोनों गुण देवी के द्योतक हैं।

प्रतिदान के रूप में देवी सरस्वती की पूजा से उन्हीं गुणों की प्राप्ति की व्याख्या पुराणों में है, जिनकी वे देवी कही गई हैं अर्थात् इनकी उपासना से वाक्पटुता, तीव्र बुद्धि, ज्ञान, विद्या, कविता और कला में प्रवीणता प्राप्त होती है। वाणी के दोष और मूकता भी देवी की उपासना से दूर हो जाते हैं। पद्म पुराण और मत्स्य पुराण के "सारस्वत व्रत" से मधुरा भारती (सुन्दर व आकर्षक वाणी, रक्तकण्ठ (संगीत भरी वाणी) रूप, विद्या, अर्थ व (आयुश्च विपुलं) दीर्घायु की प्राप्ति होती है। सरस्वती रहस्य में तो सरस्वती को निम्नलिखित शब्दों में भुक्ति और मुक्ति दोनों को प्रदान करने वाली कहा है।

"यः कवित्वं निरातंकं मुक्तिभुक्ति च वांछति।
सोऽभ्यचर्यैनां दशश्लोक्या नित्यं स्तौति सरस्वतीम् ॥"

१०—देवी सरस्वती का दिव्य स्वरूप

पुराणों में सभी देवी देवताओं के दो स्वरूपों का वर्णन मिलता है—"विश्वव्याप्य" और "दिव्य"। दिव्य रूप का दूसरा नाम ही अक्षर (पर) ब्रह्म है, जो अनन्त और वास्तविक सत्य है, और जहाँ सबके विभिन्न स्वरूप आकर मिल जाते हैं और अपने अस्तित्व को ही खो बैठते हैं। अतः दुर्गा, लक्ष्मी, ब्रह्मा, विष्णु, शिव इत्यादि विविध देवताओं व देवियों की तरह, सरस्वती भी दिव्य रूप में वही अक्षर ब्रह्म हैं और इस प्रकार यह भी कहा जा सकता है कि इस दिव्य स्वरूप में सरस्वती स्वयं ही विष्णु शिव इत्यादि हैं।

पुराणों में देवी के दिव्य स्वरूप के विकास को समझने के लिए यह स्मरण रखना आवश्यक है कि वैदिक साहित्य में इन्हें अन्तरिक्ष की देवी कहा है। एक स्थान पर ऋग्वेद में यह भी कहा है कि देवी सरस्वती अपनी ज्योति द्वारा समस्त पृथ्वी और अन्तरिक्ष में व्याप्त हैं[1]। सारांशतः वैदिक साहित्य ने इन्हें केवल "क्षेत्रीय" रूप में प्रदर्शित किया है। इस क्षेत्रीय वैदिक रूप के बाद विकास पार्थिव-धार्मिक रूप में होता है, जैसे वामन पुराण में विश्व के समस्त जलों को सरस्वती कहा है (सर्वास्त्वापस्त्वमेवेति), स्कन्द पुराण में इनका परिचय जिह्वाकी वाणी और नेत्रों की ज्योति द्वारा, अन्य मनोवैज्ञानिक इन्द्रियों द्वारा तथा गौरी, सिनीवाली, अदिति, लक्ष्मी इत्यादि देवियों के रूप में दिया है। पद्म पुराण में इनका परिचय विविध विद्याओं के रूप में है।

उपर्युक्त स्वरूप, विकास की सर्व प्रथम श्रेणी ही कही जायगी। इसके बाद ही देवी का परिचय विश्व की समस्त जड़ और चेतन वस्तुओं और प्राणियों के रूप में मिलता है। उदाहरणार्थ स्कन्द पुराण में लिखा है कि :

---

[1] आपप्रुषी पार्थिवान्युरु रजो अन्तरिक्षम्। (ऋ० वे० ६-६१-११)

यत्किंचित्त्रिषु लोकेषु बहुत्वाद्यन् न कीर्तितम् ।
इंगितं नेंगितं तच्च तद्रूपं ते सुरेश्वरि[१] ।।

मार्कण्डेय[२] और वामन[३] पुराण के सरस्वती स्तोत्रों की व्याख्या के अनुसार सम्पूर्ण जगत ओंकार के तीन मन्त्रों का ही रूप है और इसकी सभी अविनाशी और नाशवान, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष वस्तुएँ सरस्वती के ही रूप कहे गये हैं[४] । यह देवी के दिव्य स्वरूप के विकास की दूसरी श्रेणी कही जा सकती है ।

अन्त में देवी के दिव्य शरीर का विकास मिलता है, जहाँ पुराण इन्हें प्रत्यक्ष पार्थिव रूप से उठा कर अत्यधिक उच्चस्तर पर अप्रत्यक्ष "अक्षर (पार) ब्रह्म" रूप प्रदान करते हैं। ओंकार का मौन अर्धमन्त्र ही इस अप्रत्यक्ष अक्षर ब्रह्म का प्रतीक है। यही अनन्त चेतना का स्वरूप है, जो गूढ़, अविनाशी, अनिर्देश्य, अविकारी, अक्षय, दिव्य और परिणाम विवर्जित है। यही अनिद्र्देश्य, अप्रत्यक्ष और अनन्त सत्य ही सरस्वती का अति श्रेष्ठ दैविक रूप कहा गया है। इस सम्बन्ध में मार्कण्डेय पुराण का कथन है कि :-

"अनिद्र्देश्यं तथा चान्यदर्द्धमात्रान्वितं परम् ।।
अविकार्यक्षयं दिव्यं परिणामविवर्जितम् ।
तवैतत्परमं रूपं यन्न शक्यं मयोदितुं[५] ।।

यही इनका दिव्य स्वरूप है, जिसमें वे एक या अनन्य नहीं कही जा सकती हैं, क्योंकि ऐसा रूप द्विधा भाव के विचार से परे होता है।

---

[१] स्क० पु० ६-४६-२९ उ० ३० पू०

[२] मा० पु० २३-३५ से ३७

[३] वा० पु० ३२-१० से ११

[४] मा० पु० २३-३४ से ३७। "ओंकाराक्षरसंस्थानं यत्तु देवि स्थिरास्थिरम् ।।
तत्र मात्रात्रयं सर्वमस्ति यद् देवि नास्ति च ।
एतन्मात्रात्रयं देवि तव रूपं सरस्वति ।। ३७ ।।
नोट—वामन पुराण (३२-९ । १२) में भी ऐसा ही उल्लेख मिलता है। अन्तर केवल इतना है कि "यत्तु" शब्द की जगह वहाँ "यत्र" शब्द का प्रयोग हुआ है।

[५] (अ) मा० पु० २३-३९ व ४०।
(ब) वामन पुराण (२३-१४ व १५) में भी ऐसा ही उल्लेख मिलता है।

पंचम अध्याय

शिल्प (मूर्ति-कला) में सरस्वती

मूर्ति-कला में भी सरस्वती का एक विशिष्ट स्थान है। शिल्प में सरस्वती का अध्ययन सुविधा की दृष्टि से हम दो भागों में कर सकते हैं—प्रथम तो विभिन्न प्राचीन धार्मिक ग्रंथों में सरस्वती की मूर्ति के विषय में दिये हुए आदेशों का अध्ययन और द्वितीय उन प्रतिमाओं का जो भारत के विभिन्न प्रदेशों से प्राप्त हुई हैं तथा विभिन्न संग्रहालयों में सुरक्षित हैं।

१—प्रतिमा निर्माण के आदेश

प्राचीन भारतीय देवी-देवताओं की मूर्तियों को भली-भांति पहचानने और उनकी समुचित व्याख्या करने में सहायक साहित्यिक साक्ष्य तो भारत के अत्यन्त प्राचीन साहित्य में भी ढूंढे जा सकते हैं। स्वयं ऋग्वेद में, जो भारत का प्राचीनतम साहित्य है, मानव विग्रह में वर्णित वैदिक देवों का रूप बाद के काल में बनी देव प्रतिमाओं की व्याख्या में योग देता है। इसी प्रकार ईसा पूर्व के सूत्र, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र साहित्य से देवताओं की प्रतिमाओं की समुचित व्याख्या पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। बौद्ध, जैन साहित्य और रामायण-महाभारत आदि महाकाव्यों में भी इस प्रकार की प्रचुर सामग्री है। प्राचीन साहित्य में वर्णित विभिन्न रूपों में, विभिन्न देवी-देवता तत्कालीन मान्यताओं का सुन्दर चित्र उपस्थित करते हैं और निश्चत रूप से इन्हीं मान्यताओं के अनुरूप पहली बार देवी-देवताओं की प्रतिमाएँ गढ़ी जाने लगी होंगी। प्राचीन भारतीय शिल्पशास्त्र के आधुनिक विद्वानों ने इस सामग्री का भली-भांति उपयोग किया है[१]। जब भक्ति प्रधान विभिन्न भारतीय धर्मों में मूर्ति पूजा का महत्व बढ़ा, तब उनके धार्मिक ग्रंथों में प्रतिमा निर्माण और पूजा के बारे में विशिष्ट निर्देश की आवश्यकता समझी जाने लगी। यही कारण है कि वैष्णव शैव आदि धर्मों की संहिताओं, आगमों, पुराणों आदि और तद्विषयक बौद्ध और जैन-साहित्य में प्रतिमा निर्माण सम्बन्धी विस्तृत सामग्री प्राप्त होती है। जैसे-जैसे प्रतिमाओं का स्वरूप सुस्थिर होने लगा, वैसे-वैसे प्रतिमा विज्ञान की परम्परा पुष्ट होने लगी और शिल्प शास्त्र संबंधी ग्रंथों का निर्माण हुआ। प्रतिमाओं के निर्माण संबंधी सबसे विस्तृत आदेश इन्हीं ग्रंथों में हैं। पर इन ग्रंथों के मूल आधार अधिकांश, ब्राह्मण, जैन, बौद्ध धार्मिक साहित्य में उपलब्ध प्राचीन आदेश ही हैं। यह तो निर्विवाद है कि मूर्तियों का निर्माण पहले प्रारम्भ हुआ और बाद में तत्संबंधी साहित्यिक सामग्री का निर्माण हुआ, जिनमें विभिन्न देवी-देवताओं की प्रतिमाओं के आदेश स्थिर किए गए, ठीक उसी प्रकार जैसे भाषा के विकास के बाद ही व्याकरण का निर्माण होता है।

उपर्युक्त वक्तव्य सामान्य रूप से सभी देवी-देवताओं की प्रतिमा के संबंध में लागू है, पर सरस्वती के प्रतिमा-निर्माण से संबंधित सामग्री मुख्य रूप से मध्ययुगीन साहित्य में ही है, जिसका यहाँ उल्लेख किया जायेगा, क्योंकि सरस्वती को ब्राह्मण, जैन, बौद्ध सभी धर्मों में आदर का स्थान प्राप्त हुआ था। इन तीनों ही धर्मों से सम्बद्ध धार्मिक साहित्य में देवी के रूप के सम्बन्ध में और उनकी प्रतिमा-निर्माण के विषय में प्रचुर सामग्री है। सुविधा की दृष्टि से हम पहले सरस्वती की मूर्तियों की व्याख्या में सहायक साहित्यिक साक्ष्य को ही देखेंगे।

---

[१] इसका सबसे उत्कृष्ट उदाहरण जे० एन० बनर्जी की पुस्तक Development of Hindu Iconography है।

(क) ब्राह्मण धर्म के ग्रन्थो के अनुसार सरस्वती की प्रतिमा निर्माण का निर्देश

विविध 'पुराण' और 'आगम' साहित्य में सरस्वती के प्रतिमा निर्माण के निर्देश मिलते हैं। इनमें उल्लिखित निर्देश भी दो प्रकार के हैं। प्रथम, ऐसी प्रतिमा जो किसी देवता के साथ हो, और दूसरी वह जो स्वतंत्र हो अर्थात् उसे किसी देवी या देवता की सहायिका के रूप में प्रदर्शित न किया गया हो।

मत्स्य पुराण के अनुसार विष्णु की प्रतिमा के दोनों ओर सरस्वती अथवा पुष्टि तथा लक्ष्मी अथवा श्री की प्रतिमा होनी चाहिये और सरस्वती अथवा पुष्टि तथा लक्ष्मी अथवा श्री को अपने हाथों में कमल धारण किए रहना चाहिये[१]।

स्कन्द पुराण की सूत संहिता के अनुसार देवी के सिर पर जटा मुकुट और उसके अन्दर अर्ध-चन्द्र प्रदर्शित हैं। इन्हें नीले रंग के कंठ और तीन नेत्रों वाली बताया है[२]। स्पष्ट ही सरस्वती का यह रूप शिव से उनके संबंध का द्योतक है।

मार्कण्डेय पुराण के देवी माहात्म्य के अनुसार इनके चारों हाथों में अंकुश, वीणा, अक्षमाल और पुस्तक होना चाहिये[३]। (होयसल की मूर्तियों में सरस्वती का यही रूप दिखाया गया है, जो सम्भवतः यह प्रदर्शित करता है कि ये शिव की शक्ति हैं।

अग्नि पुराण के अध्याय ४४ के अनुसार 'श्री' तथा 'पुष्टि' (सरस्वती) अपने हाथों में क्रमशः कमल तथा वीणा लिए हुए ऊँचाई में मुख्य मूर्ति (विष्णुप्रतिमा) की जंघा तक होना चाहिये[४]। इस प्रकार की एक मूर्ति लखनऊ संग्रहालय में है (फलक १)। विष्णु की खड़ी प्रतिमा के दाहिनी ओर श्री और बायीं ओर सरस्वती हैं, जिनकी ऊँचाई विष्णु की जंघा तक है। सरस्वती के दो हाथ हैं, जिनके द्वारा वे वीणा झंकृत करती दिखाई गई हैं। केश विन्यास व यज्ञोपवीत भी प्रदर्शित हो रहे हैं। सरस्वती की बाईं ओर एक अन्य पुरुष प्रदर्शित है, जिसके हाथ में चक्र है। यह प्रतिमा गोरखपुर से प्राप्त हुई थी। लगभग ऐसी ही एक प्रतिमा किसुन गंज (पूर्णिया) से मिली है और पटना संग्रहालय में है। यह मूर्ति १२वीं शताब्दी की है। इसी तरह की एक चांदी की प्रतिमा भी भारतीय संग्रहालय कलकत्ता में है। यह प्रतिमा १९०९ में मिली थी। इसकी कारीगरी अत्यन्त सुन्दर और कलापूर्ण है। इसी तरह स्वतन्त्र मूर्तियों के बारे में भी निर्देश हैं। अध्याय ५० के अनुसार देवी के चार हाथ होना चाहिये, जिनमें से अगले दाहिने और बायें हाथ से देवी वीणा वादन करती हों तथा पिछले दाहिने और बायें हाथों में क्रमशः माला और पुस्तक धारण किये हों[५]। साथ ही देवी का वाहन

---

[१] श्रीश्च पुष्टिश्च कर्तव्ये पार्श्वयोः पद्मसंयुते। (२५८-१३ पु०)

[२] "जटाजूटधरा शुद्धा चन्द्रार्धकृतशेखरा।
पुण्डरीकसमासीना नीलग्रीवा त्रिलोचना॥"
(स्क० पु० सूत संहिता - T. A. Gopinatha Rao.)

[३] "अक्षमालाङ्कुशधरा वीणापुस्तकधारिणी।
सा बभूव वरा नारी ··· ··· ··· ॥"
(मा० पु०—प्रा० र—१५) T. A. Gopinatha Rao.

[४] "श्री पुष्टिचापि कर्तव्ये पद्मवीणाकरान्विते।
ऊरुमात्रोच्छ्रितायामे मालविद्याधरो तथा॥" (अ० पु० ४४-४८)

[५] "पुस्तकाक्षमालिकाहस्ता वीणाहस्ता सरस्वती। (अ० पु०—५०-१६)

हंस भी प्रदर्शित होना चाहिए। ऐसी भी एक मूर्ति लखनऊ संग्रहालय में है (फलक - २) देवी सरस्वती कमल के ऊपर एक पैर लटकाये हुए आसीन हैं। इनके चार भुजाएँ हैं, जिनमें से दाहिनी ओर का एक हाथ खंडित है तथा दूसरे में वीणा है। बाईं ओर के एक हाथ में लेखनी और दूसरे हाथ में पुस्तक है। पीठिका पर नीचे की ओर देवी का वाहन हंस भी प्रदर्शित है। (दोनों में अन्तर केवल यह है कि अग्नि पुराण के अनुसार वीणा दो हाथों में होनी चाहिए, किन्तु इस प्रतिमा में वीणा एक हाथ में है और दूसरे हाथ में लेखनी है)। यह प्रतिमा भी गोरखपुर से प्राप्त हुई है। अध्याय ३१९ के अनुसार देवी के चार हाथ होना चाहिये, जिनमें से अगला दाहिना हाथ वरद मुद्रा में, पिछला दाहिना हाथ माला युक्त, आगे का बायां हाथ अभय मुद्रा और पीछे का बायाँ हाथ पुस्तक धारण किये होना चाहिए। साथ ही देवी के वाहन हंस को भी प्रदर्शित करना आवश्यक है[१]।

कल्कि पुराण के अनुसार भी विष्णु के दायीं ओर श्री तथा बायीं ओर सरस्वती होंगी[२]।

ब्राह्मण धर्म की पौराणिक गाथाओं में देवी सरस्वती को कभी ब्रह्मा, कभी गणपति और कभी विष्णु से सम्बन्धित शक्तियों या देवियों के रूप में भी अंकित किया गया है, जहाँ देवी को वीणा पुस्तक आदि चिह्नों से पहिचाना जा सकता है[३]। स्वतन्त्र रूप में देवी को अधिकतर कमल के फूल की पीठिका पर आसीन दिखाया गया है। उनके विशिष्ट चिह्न अर्थात् वीणा तथा पुस्तक और वाहन हंस भी, अधिकांशतः, प्रदर्शित हैं। भारत के दक्षिणी प्रदेशों से प्राप्त विष्णु की प्रतिमाओं में विष्णु के दोनों ओर अंकित देवी प्रतिमाओं को "श्री" तथा "भू" कहा है।

विविध प्राचीन ग्रन्थों में सरस्वती को श्वेत वर्ण वाली, श्वेत वस्त्र धारण करने वाली, अलंकार युक्त, अपने विशिष्ट चिह्न वीणा, पुस्तक, कमण्डलु, माला तथा पुण्डरीक आदि में से किन्हीं चार से युक्त होना चाहिये। श्वेत वस्त्र व श्वेत वर्ण सम्भवतः देवी की पवित्रता के प्रतीक हैं। इस प्रकार के वर्णन आगमों में मिलते हैं, जिनमें से कुछ प्रमुख उल्लेख इस प्रकार हैं।

वैखानस आगम के अनुसार सरस्वती की प्रतिमा प्राचीन मापदण्डों से मध्यम दस ताल (१२० अंगुल) की होनी चाहिये[४]।

अंशुमद्भेदागम के अनुसार देवी सरस्वती श्वेत वर्णा, श्वेत वस्त्रधारिणी, श्वेत कमल पर आसीन रहती हैं। इनके चार हाथों में से दाहिनी ओर के एक हाथ में अक्षमाल तथा दूसरा व्याख्यान मुद्रा में और बायीं ओर के एक हाथ में पुस्तक तथा दूसरे में श्वेत कमल होते हैं। इन्हें घेरे हुए चारों ओर बहुत से मुनि पूजा करते

---

[१] मध्येपद्मं पूर्व्ववच्च विघ्नध्वंसं वदाम्यथ।
चतुर्हस्तं पुरं कृत्वा वृत्रंचव करद्वायम॥ इत्यादि (अ० पु० ३१९-३५...)

[२] दधानं दक्षिणे देवीं श्रियं पार्श्वे तु विभ्रतम्।
सरस्वतीं वाम पार्श्वे ... ... Benerjea J. N. Developmont of Hindu Iconography)

[३] गणशो भारती श्रीभ्यां वामेऽवामे युतोऽथवा।
उत्तरकामिकागमे पंचचत्वारिंशत्तम पटले—(T. A. Gopinatha Rao)

[४] Banerji, J. N. —Developmont of Hindu Iconography.

दिखाये जाते हैं। देवी यज्ञोपवीत धारण किये रहती हैं और सिर पर जटामुकुट तथा शरीर पर विभिन्न आभूषण रहते हैं[१]।

लगभग इसी प्रकार का वर्णन पूर्णकारणागम में मिलता[२] है। प्रमुख अन्तर यह है कि अंशुमद्भेदागम के अनुसार देवी के कुण्डल "लाल" होते हैं और पूर्वकारणागम के अनुसार ये कुण्डल "मोती के होते हैं।

विष्णु धर्मोत्तर में खड़ी सरस्वती-मूर्ति का वर्णन है[3]। इसके अनुसार सरस्वती अपने दोनों पैरों पर खड़ी और प्रसन्न मुखी होनी चाहिये तथा प्रतिमा सब आभूषणों से भूषित होनी चाहिये। देवी के चार भुजायें हों – दाहिने दोनों हाथों में पुस्तक और अक्षमाल तथा बायें दोनों हाथों में वीणा और कमण्डलु होना चाहिये।

मध्ययुगीन उत्तर भारत में सरस्वती का वाहन श्वेत हंस देवी के समीप प्रदर्शित करने का प्रचलन हो गया था। दक्षिण भारत में देवी का वाहन मयूर भी दिखाया गया है। कहीं-कहीं सिंह और मेमना भी देवी के वाहन रूप में प्रदर्शित किये गये हैं, जिनके सम्बन्ध में कुछ लोक कथायें भी प्रचलित हैं[४]।

---

[१] सरस्वती चतुर्हस्ता श्वेतपद्मासनान्विता।
जटामुकुटसंयुक्ता शुक्लवर्णा सिताम्बरा॥
यज्ञोपवीतसंयुक्ता रत्नकुण्डलमण्डिता।
व्याख्यानं चाक्षसूत्रं च दक्षिणे तु करद्वये॥
पुस्तकं पुण्डरीकं च त्रिनेता चारुरूपिणी।
ऋज्वागता कृतास्सर्वे मुनिभिस्सेविता वरा॥
एव लक्षणसंयुक्ता वाग्देवी परिकीर्तिता॥"
(अंशुमत भेदागमे एकोनपंचाशत् पटले)

[२] श्वेतपद्मासीनां शुक्लवर्णां चतुर्भुजाम्।
जटामुकुटसंयुक्तां मुक्ताकुण्डलमण्डिताम्॥
यज्ञोपवीतिनीं हारमुक्ताभरणभूषिताम्।
दुकूलवसनां देवीं नेत्रत्रयसमन्विताम्॥
अभयं दक्षिणे हस्ते वामहस्ते तु पुस्तकम्।
दक्षिणे चाक्षमाला च करकं वामके करे॥
वागीश्याकृतिराख्याता दुर्गयाकृतिरुच्यते।
............(पूर्वाकारणागमे द्वादश पटले—T. A. Gopinatha Rao)

[३] देवी सरस्वती कार्या सर्वाभरणभूषिता।
चतुर्भुजा सा कर्तव्या तथैव च समुत्थिता॥
पुस्तकं चाक्षमाला च तस्या दक्षिणहस्तयोः।
वामयोश्च तथा कार्या वैष्णवी च कमण्डलुः॥
सम्प्रादप्रतिष्ठा च कार्या सौम्यमुखी तथा।
............(वि० ध० पु०—चतुः षष्ठितमोऽध्यायः)

[४] Das Gupta, S. B. Aspects of Indian Religious Thoughts.

(ख) जैन ग्रन्थों में सरस्वती की प्रतिमा निर्माण के आदेश

जैन धर्म में भी ब्राह्मण धर्म के बहुत से देवी देवताओं को स्थान दिया है। उनकी मूर्तियां भी लगभग उसी ढंग की बनती थीं। जैन-धर्म की श्वेताम्बर शाखा के कुछ ग्रन्थों में एक यक्षिणी मयूर पर वर्णित है[1]। इस यक्षिणी के चार हाथ हैं, जिनमें बीजपूरक (citron) बर्छा, मुषण्डी और कमल हैं। इसी से (विशेष कर वाहन मयूर से इन्हें सरस्वती समझा गया है। इसकी पुष्टि एक और बात से होती है। देवी के साथ के गंधर्व सूर्य पर सवारी करने वाले और दैवी संगीतकार माने गये हैं। देवी सरस्वती भी इसी तरह कला और संगीत की देवी मानी गई हैं तथा दोनों हाथ में एक ही प्रकार का बीजपूरक चिह्न भी हैं। श्वेताम्बरों के कुछ अन्य ग्रन्थों के अनुसार देवी के चार हाथ होते हैं, जिनमें से एक वरद मुद्रा में और शेष तीन कमल पुस्तक और माला होती है तथा इन्हें हंस वाहिनी भी कहा गया है। इस सम्बन्ध में आचार्य दिनकर का कथन है:

"श्वेतवर्णा श्वेतवस्त्रधारिणी हंसवाहना श्वेतसिंहासनासीना......

......चतुर्भुजा श्वेताब्जवीणालंकृतवामकरा पुस्तकमुक्तामालालंकृतदक्षिकरा (प्रतिष्ठा कल्प)

दिगम्बर शाखा के कुछ ग्रंथों में सरस्वती का वाहन मयूर कहा है। उदाहरणार्थ:---

"वाग्वादिनि भगवति सरस्वति ह्री नमः इत्येनेन मूलमन्त्रेण वेष्टयेत्।
ओं ह्रीं मयूरवाहिन्मे नमः इति वागाधिदेवतां स्थापयेत्। (प्रतिष्ठा सारोधार)

जैन धर्म में विद्या की देवियां सोलह हैं। इनके अतिरिक्त इस धर्म की दोनों शाखाओं में एक श्रुत देवी भी हैं, जो सम्भवतः सरस्वती ही हैं क्योंकि ये ब्रह्मण धर्म की सरस्वती से बहुत मिलती जुलती हैं तथा इन सोलहों से श्रेष्ठ मानी गई हैं। इनका नाम श्रुत देवी इसलिए है कि "श्रुत" का अर्थ है वेद या अन्य ग्रन्थों का श्रवण द्वारा पारायण करना। जैन धर्म में इन्हें वेदों और प्राचीन ग्रन्थों के ज्ञाता ब्रह्मा की पत्नी के बराबर का स्थान दिया गया है और इनकी पूजा का विशेष महत्त्व है। विद्या की देवी के रूप में जैन-धर्म में सरस्वती का उतना ही महत्त्व है, जितना कि ब्राह्मण-धर्म में ब्रह्मा की पत्नी सरस्वती का। उनके चिह्न (वीणा, पुस्तक आदि) भी लगभग एक से ही हैं।

सरस्वती की मूर्ति निर्माण में सम्भवतः जैन-धर्म को विशेष स्थान मिलना चाहिये। सरस्वती की आज तक की प्राप्त प्रतिमाओं में सबसे प्राचीन मथुरा के कंकाली टीले से प्राप्त प्रतिमा है, जो जैन ढंग की है।

---

[1] Bhattaccharya, B. C. Jain Iconography. पृष्ठ सं० १३७।

"तात्तीर्थमूर्वला देवी गौरांगी केकिवाहनी।
बिभ्राणा दक्षिणौवाह बीजपूरकशूलिनी॥
मुषंडी पंकजमृत्यो बिभ्रती दक्षिणे करे।
सदासन्निहिता जज्ञे प्रभो शासनदेवता॥ (कुण्ठ स्वामी चरितम्---हेमचन्द्र)

दिगम्बर शाखा के ग्रंथ "प्रतिस्यसार संग्रह" में भी एक ऐसी ही शूकर वाहिनी यक्षिणी का वर्णन मिलता है, किन्तु इसका सरस्वती होना संदिग्ध है।

"जया देवी सवर्णाभा कृष्णशूकरवाहना।
शंकासिचक्रहस्तासौ वरदा धर्म्मवत्सला॥

—Bhattacharya, B. C.--Jain Icongraphy. पृष्ठ सं० १६३

(ग) बौद्ध ग्रंथों में सरस्वती की प्रतिमा निर्माण के निर्देश

सरस्वती का बौद्ध धर्म में भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। जैन धर्म की भांति ब्राह्मण धर्म के बहुत से देवी-देवताओं को बौद्ध धर्म ने भी अपनाया, जिनमें सरस्वती भी थीं। बौद्ध धर्म ने भी सरस्वती को ब्राह्मण धर्म की ही तरह विद्या तथा ज्ञान की देवी माना। इस धर्म में सरस्वती के विविध रूप वर्णित हैं[1]। इन्हें कभी दो हाथ वाली, कभी तीन मुखों वाली और छः हाथों वाली कहा है। बौद्ध ग्रन्थों में सरस्वती के विभिन्न नाम तथा उनके प्रतिमा निर्माण के आदेश इस प्रकार हैं: —

(१) महा सरस्वती

इनका एक हाथ वरद मुद्रा में और दूसरे हाथ में कमल रहता है। देवी अत्यन्त करुणामयी तथा सुन्दर हैं। यह वयः सन्धि की अवस्था में हैं। इनके साथ चार और देवियाँ रहती हैं, जिन्हें प्रज्ञा, मेधा, स्मृति और मति कहा गया है। सरस्वती की ये चारों सहायक देवियाँ सरस्वती की ही आकृति में हैं। ऐसा ज्ञात होता है कि यहाँ गुण वाचक संज्ञाओं को ही मूर्ति का रूप दिया गया है।

(२) वज्र वीणा सरस्वती

इन देवी की विशिष्ट पहिचान यह है कि देवी अपने दोनों हाथों से वीणा झंकृत कर रही हैं।

(३) वज्र शारदा

इन देवी की तीन आँखें हैं। देवी के बायें हाथ में पुस्तक और दायें हाथ में कमल है। इन्हें भी चार सहायक देवियों सहित प्रदर्शित किया गया है। नालन्दा से प्राप्त वज्र शारदा की मूर्ति में देवी भद्रासन में हैं।

(४) आर्य सरस्वती

इन देवी को षोडशी युवती के रूप में दिखाया गया है। इनके बायें हाथ में कमल नाल है, जिसपर प्रज्ञापारमिता अंकित है। शेष बातें पूर्व सरस्वती ही की तरह हैं।

(५) वज्र सरस्वती

इन देवी के तीन मुख तथा छः हाथ हैं और वे प्रत्यालीढ़ आसन पर लाल कमल के ऊपर खड़ी हैं। सिर के बाल खड़े दिखाये गये हैं। दाहिनी ओर के तीनों हाथों में क्रमशः प्रज्ञापारमिता (पुस्तक-ग्रंथ) युक्त कमल, कृपाण तथा कर्तरी हैं और बाईं ओर के तीनों हाथों में क्रमशः ब्रह्मा का कपाल, रत्न तथा चक्र हैं। कहीं-कहीं इन देवी के हाथों में प्रज्ञापारमिता और ब्रह्मा को छोड़ कर केवल कमल तथा कपाल ही चित्रित किये गये हैं।

"शारदा तिलक तंत्र शास्त्र" नामक तंत्र ग्रन्थ के सातवें पटल के अनुसार सरस्वती देवी की प्रतिमा छः प्रकार से बनाने का निर्देश है[2]: —

---

[1] डा० वि० प्र० सिंह—भारतीय कला को विहार की देन।

[2] Bhattasali, N. K.—Ieonogiaphy of Buddhist and Brahmanical Sculpture in the Dacca Maseum. पृष्ठ सं० १९८

(१) देवी के शरीर की रचना वर्णाक्षरों के ढंग की हो तथा उनके चार हाथ हों। आगे का दाहिना हाथ वरद मुद्रा में, पीछे के दाहिने हाथ में माला, आगे के वायें हाथ में मनुष्य का कपाल और पीछे के वायें हाथ में पुस्तक होनी चाहिये।

(२) देवी के दो हाथ हों। दाहिने हाथ में लेखनी और वायें में पुस्तक होनी चाहिये।

(३) देवी के चार हाथ हों। आगे का दाहिना हाथ व्याख्यान मुद्रा में, पीछे के दाहिने हाथ में माला, आगे के वायें हाथ में अमृत कलश और पीछे के वायें हाथ में पुस्तक होनी चाहिये।

(४) देवी के चार हाथ हों। आगे के दाहिने हाथ से वीणा झंकृत करती हों, पीछे के दाहिने हाथ में माला हो, आगे के वायें हाथ में अमृत कलश और पीछे के बायें हाथ में पुस्तक होनी चाहिये।

(५) देवी के चार हाथ हों। आगे के दाहिने हाथ में लेखनी और पीछे के दाहिने हाथ में माला, हो, आगे के वायें हाथ में कमल तथा पीछे के वायें हाथ में पुस्तक होनी चाहिये। ऐसी मूर्ति के साथ देवी का वाहन हंस भी प्रदर्शित रहता है।

(६) देवी के चार हाथ हों। आगे का दाहिना हाथ व्याख्यान मुद्रा में, पीछे के दाहिने हाथ में माला हो, आगे के वायें हाथ में रत्नों से परिपूर्ण पात्र और पीछे के वायें हाथ में पुस्तक होना चाहिये। यहाँ भी देवी के वाहन हंस की उपस्थिति अनिवार्य है।

इसीप्रकार "प्रपंचसारतंत्र" में भी दो प्रकार के प्रतिमा निर्माण के आदेश हैं[१]। पहिले प्रकार के प्रतिमा निर्माण का आदेश तीसरे और सातवें अध्याय में तथा दूसरे प्रकार के प्रतिमा-निर्माण का आदेश आठवें अध्याय में इसप्रकार मिलता है:-

१ देवी की शरीर रचना वर्णाक्षरों के अनुसार होनी चाहिये। इनके चार हाथ हों, जिनमें से आगे का दाहिना हाथ प्रतर्क मुद्रा में (Abstraction) और पीछे के दाहिने हाथ में माला हो, आगे के वायें हाथ में कलश और पीछे के वायें हाथ में पुस्तक होनी चाहिये।

२—देवी के चार हाथ हों। आगे के दाहिने हाथ से वीणा झंकृत करती हों और पीछे के दाहिने हाथ में माला हो, आगे के वायें हाथ में अमृत कलश हो और पीछे के वायें हाथ में पुस्तक होनी चाहिये। साथ साथ ही देवी का वाहन हंस भी होना चाहिये।

२—कुछ प्रतिमाओं के वर्णन

विभिन्न धार्मिक ग्रंथों में सरस्वती की सामान्य प्रतिमा निर्माण के निर्देशों के उल्लेख के पश्चात् हम देवी की उपलब्ध मूर्तियों पर दृष्टिपात कर सकते हैं। ऐसे तो सरस्वती की अनेक प्रतिमायें अब तक मिल चुकी हैं, जो विभिन्न संग्रहालयों में सुरक्षित हैं, परन्तु सब का विवरण सम्भव नहीं। यहाँ नीचे सरस्वती की कुछ प्रमुख प्रतिमाओं का वर्णन किया जारहा है। प्रारंभ में ही यह कह देना उचित होगा कि यह प्रश्न भी विवाद ग्रस्त है कि सरस्वती की अब तक पाई जाने वाली मूर्तियों में कौन सब से प्राचीन है।

---

[१] Bhattasali, N. K.—Iconography of Buddhist and Bramanical Sculptures in the Dacca Museum. पृ० संख्या १८९

(क) भरहुत

भरहुत की वेष्टन वेदिका के स्तम्भ पर उत्कीर्ण वीणायुक्त स्त्री मूर्ति (फलक—३) बी० एम० बरुआ और जे० एन० बनर्जी आदि विद्वानों की दृष्टि में सम्भवतः सरस्वती के ही प्रारम्भिक रूप को प्रदर्शित करती है[१]। यह मूर्ति बहुत ही भग्नावस्था में है, परन्तु जो कुछ भी शेष है, उससे इसके स्वरूप को समझा जा सकता है। यहाँ देवी गौरवपूर्ण ढंग से कमल के ऊपर खड़ी हैं, जिससे उनके दैविक स्वरूप का भान होता है। शरीर पर रुचिपूर्ण अलकार हैं और देवी दोनों हाथों से वीणा वादन करती दिखाई गई हैं। दाहिना पैर प्रभावशाली ढंग से मुड़ा हुआ है और मुख पर दैवी आभा दृष्टिगोचर होती है। ये सब ऐसी विशेषताएँ हैं, जो सहसा एक स्थान पर आसानी से नहीं मिलतीं। इस मूर्ति को सरस्वती का चित्रण तो निस्सन्देह रूप से नहीं कहा जा सकता, फिर भी इसके स्पष्ट देवी रूप और वीणा के आधार पर, बरुआ का यह कथन है कि "यह मूर्ति हिन्दू देवी सरस्वती का प्रारम्भिक रूप है"।

(ख) लखनऊ

सामान्यतया मथुरा के कंकाली टीले से प्राप्त एक मूर्ति जो लखनऊ संग्रहालय में सुरक्षित है (फलक—४), अधिकांश विद्वानों द्वारा देवी सरस्वती की सबसे प्राचीन प्रतिमा मानी जाती है। इस मूर्ति में देवी को एक चौकोर पीठिका पर आसीन दिखाया गया है। इनके बायें हाथ में पुस्तक है और दाहिना उठा हुआ हाथ खंडित है। उठे हुए दाहिने हाथ से ऐसा ज्ञात होता है कि देवी व्याख्यान या अभय मुद्रा में रही होंगी। देवी के वस्त्र ढीले-ढाले हैं और उनके दोनों ओर घुंघराले बालों वाले दो पार्श्वचर खड़े हैं। बायीं ओर वाले पार्श्वचर के शरीर पर घांघरे जैसा वस्त्र है। उनके हाथों में एक कलश है, जो संभवतः ज्ञान रूपी अमृत-कलश का भाव प्रदर्शित करता है। दूसरी ओर वाला पार्श्वचर हाथ जोड़े भक्ति भाव से खड़ा है। पीठिका के ऊपर सात पंक्तियों का एक अभिलेख ब्राह्मी लिपि में उत्कीर्ण है, जिससे ज्ञात होता है कि यह मूर्ति कुषाण काल की है। इस अभिलेख का मूल और अर्थ इस प्रकार है :—

पंक्ति संख्या	लेख[२]
१	सिधम् सव ५० ४ हेमन्तमासे चतुर्थे ४ दिवसे १० अ
२	स्य पुर्व्वायां कोट्टियातो (ग) णातो स्थानि (य) या तो कुलातो
३	वैरातो शाखातो श्रीगृह (I) तो संभोगातो वाचकस्यार्य्य–
४	(ह) स्तहास्तिस्य शिष्यो गणिस्य अर्य्यमाघहस्तिस्य श्रद्धचरो वाचकस्य अ–
५	र्य्यदेवस्य निर्व्वर्तने गोवस्य सीहपुत्रस्य लोहिककारुकस्य दानं
६	सर्व्वसत्वानां हितसुखा एक सरस्वती प्रतीष्ठाविता अवतले रंगान (र्तन) ो
७	मे (॥)

[१] J. N. Banerjea—'Development of Hindu Iconography.

[२] *Epigraphia Indica*, Vol. I (1892). Page 301—No. XXI.

अनुवाद[1]

Success : in the year 54 (?), in the fourth, 4, month of winter, on the tenth day, – on the (Lunar day specified) as above, one (statue of) Sarasvati, the gift of the smith Gova, son of Siha, (made) at the instance of the preacher (Vachaka) Aryya-Deva, the Sraddhacharo of the ganin Aryya-Maghahasti, the pupil of the preacher Aryya Hastahasti, from the kottiya gana, the Sthaniya kula, the vaira ṣakha and the Srigriha sambhoga, —has been set up for the welfare of all beings. In the avatala my stage dancer (?)

डा० जैन के अनुसार इसका तात्पर्य है "सब जीवों की हित व सुखकारी यह सरस्वती की प्रतिमा सिंहपुत्र-शोभनामक लुहार कासक (शिल्पी) ने दान किया, और उसे एक जैन मन्दिर की रंगशाला में स्थापित की"[2]। अपने विशेष लक्षणों द्वारा यह मूर्ति जैन ढंग की प्रतिमा ज्ञात होती है।

(ग) खिचिंग

भरहुत की प्रतिमा से मिलती-जुलती एक मूर्ति खिचिंग (भंज-उड़ीसा) से भी प्राप्त हुई है। (फलक—५)। इसमें आधी लम्बाई की आकृति की सात फणों वाली नाग कन्या वीणा वादन करते दिखाई गई है। इनको साधारणतः देवियों के धारण करने योग्य वस्त्र व आभूषणों से अलंकृत किया गया है। केश-विन्यास भी अत्यन्त सुरुचिपूर्ण है। इन्हीं अलंकारों तथा केश-विन्यास के द्वारा यह स्पष्ट होता है कि ये साधारण नाग-कन्या नहीं हैं, अपितु एक ऐसी देवी हैं, जिनकी समानता वीणा धारण करने वाली भारतीय देवी सरस्वती से ही की जा सकती है।

यह विशेष रूप से ध्यान देने योग्य बात है कि भरहुत तथा खिचिंग की उपर्युक्त प्रतिमाओं में (जो सरस्वती के रूप से मिलती जुलती हैं) लोक तत्वों की प्रधानता है तथा इन्हीं लोक तत्वों के दर्शन कंकाली टीले (मथुरा) से प्राप्त मूर्ति में भी होते हैं, जैसे सामान्य शरीराकृति, न्यग्रोध परिमंडल, बैठने की मुद्रा, परिधान, इत्यादि।

(घ) कलकत्ता

भारतीय संग्रहालय, कलकत्ता, में एक पत्थर का द्वार-चौखट रक्खा है, जो बंगाल के मालदा जिले के गौड़ नामक स्थान से प्राप्त हुआ था। इसमें ब्रह्मा की तीन मुख तथा चार हाथ वाली मूर्ति है और उनके दोनों ओर उनकी स्त्रियाँ, सावित्री और सरस्वती, प्रदर्शित हैं (फलक—६)। इनके साथ गायन वादन करती हुई कई दास दासियाँ उत्कीर्ण हैं। सरस्वती तथा सावित्री दोनों ही चार-चार हाथों वाली हैं। सरस्वती वरद मुद्रा में, और अक्षमाला, वीणा तथा कमण्डलु धारण किए हैं और सावित्री का बायाँ (नीचे का) हाथ कटिहस्त मुद्रा में है तथा अन्य हाथों में वे कौड़ी, अक्षमाला व पुस्तक धारण किए हुए हैं।

---

[1] *Epigraphia Indica,* Vol. I (1892). Page 301—No XXI.

[2] डा० हीरालाल जैन —भारतीय संस्कृति में जैन धर्म का योगदान

(ङ) ढाका

एक सुन्दर प्रतिमा ढाका संग्रहालय में है (फलक—७)। इसमें देवी को चार हाथों वाली दिखाया है। देवी, दोहरी पंक्तियों वाली पंखुड़ियों की कमल-पीठिका पर ललितासन में आसीन हैं। आगे के दोनों हाथों से वे वीणा झंकृत कर रही हैं और पीछे के दाहिने हाथ में माला तथा बायें में पुस्तक धारण किये हैं। कमल की पंखुड़ियाँ अत्यन्त सुन्दर ढंग से उत्कीर्ण हैं, (जिसका प्रचलन ग्यारहवीं और बारहवीं शताब्दियों में अच्छी तरह हो चुका था)। प्रभावली के शिरोभाग के मध्य में कीर्तिमुख, उड़ते हुए विद्याधर आदि हैं। देवी के सिर के ऊपर त्रिकोण मेहराब है और दोनों ओर चामर-ग्राहिणी आदि हैं। पीठिका पर बायीं ओर देवी का वाहन हंस अंकित है। दाहिनी ओर कोने में हाथ जोड़े दान करने वाले की आकृति है। सभी विशेषतायें इस बात की द्योतक हैं कि यह सरस्वती की पूर्ण विकसित मूर्ति है।

यह सुन्दर मूर्ति ढाका के समीप "वज्रयोगिनी" ग्राम में मिली थी, जिसका प्राचीन नाम सम्भवतः विक्रमपुर था। यहाँ से बहुत सी बौद्ध मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं जो बौद्ध धर्म की वज्रयान शाखा की ज्ञात होती हैं। प्राचीन काल में सम्भवतः यह बौद्ध धर्म का केन्द्र रहा होगा और शायद इसी कारण इसका यह नाम पड़ा। इस ग्राम के मध्य में कुछ प्राचीन खण्डहरों के अवशेष हैं, जिसे यहाँ के लोग "नास्तिक पण्डितेर भीटा" अर्थात् नास्तिक विद्वानों के घर के खण्डहर कहते हैं। इन्हीं खण्डहरों के पास एक और टीला है, जिसे "टोल बादेर भीटा" अर्थात् पाठशाला कहते हैं। इसी पाठशाला के अवशेषों के नीचे एक तालाब में विद्या की देवी सरस्वती की उपर्युक्त प्रतिमा प्राप्त हुई थी। ऐसा कहा जाता है कि आचार्य अतिस दीपंकर, जो "विक्रमशिला" विहार से १०४० ई० में तिब्बत गये थे और वहाँ जाकर बौद्ध धर्म को दोषों से निवृत्त किया था, का घर वंग देश के "विक्रमणिपुर" में था। यह विक्रमणिपुर सम्भवतः इसी विक्रमपुर का दूसरा नाम था। जन-साधारण का यह विश्वास है कि आचार्य अतिस दीपंकर उसी नास्तिक विद्वान् का नाम था और उसी के घर के यह खण्डहर जो नास्तिक पण्डितेर भीटा कहलाता है तथा पाठशाला वाले खण्डहर सम्भवतः विक्रमशिला नामक प्राचीन विद्यालय के हैं, जो बारहवीं शताब्दी में बख्तियार खिलजी द्वारा भूमिसात् किया गया था।

(च) पटना

धातु की बनी सरस्वती की मूर्तियों का उल्लेख कम मिलता है। नालंदा के प्राप्त काँसे की बनी सरस्वती की एक मूर्ति उल्लेखनीय है (फलक—८)। यह मूर्ति पाल युग (लगभग ११-१२ वीं शताब्दी) की प्रतीत होती है और पटना संग्रहालय में सुरक्षित है। देवी सरस्वती दो सेविकाओं के साथ हैं। देवी दाहिनी ओर कुछ झुकी हैं और हाथ में वीणा है। पारदर्शक वस्त्र पहिने हुए हैं, जिससे बाँया स्तन तो पूरी तरह ढका है और दाहिने स्तन का कुछ भाग खुला है (यह विशेषता पाल शैली की पाषाण मूर्तियों में भी मिलती है)। देवी के गले में मोतियों का हार है। नीचे एक सेविका घट लिए हुए है और दूसरी जल-पात्र। दोनों मूर्तियाँ एक ओर झुकी हैं। सरस्वती का बायाँ हाथ वीणा पर है, मानो वीणा के तार झंकृत हो रहे हों। देवी की त्रिभंग-स्थिति और वीणा पर उँगलियों के द्वारा कलाकार ने गति और सक्रिय भावना को व्यक्त करने का सफल प्रयास किया है।

(छ) लंदन

धातु की बनी मूर्तियों की तरह सरस्वती की संगमर्मर की बनी मूर्तियों का वर्णन भी कम ही मिलता

है। सफेद संगमर्मर की बनी सरस्वती की एक प्रतिमा ब्रिटिश संग्रहालय में सुरक्षित है (फ़लक—९)। यह सम्भवतः राजपूताना से प्राप्त ११-१२ वीं शताब्दी की है। इसमें सरस्वती छठ तीर्थंकर के रक्षक के रूप में प्रदर्शित की गई हैं। नीचे एक अभिलेख भी है।

(ज) तंजौर

तंजौर के बृहदीश्वर मन्दिर में सरस्वती की एक प्रतिमा है, जिसमें देवी वीरासन में सीधी आसीन दिखाई गई हैं (फलक—१०)। देवी के दो हाथ हैं, जिसमें दाहिना खण्डित है। बाईं ओर का हाथ बायें ओर की जंघा पर आधारित है और इसमें एक पुस्तक है। देवी के दोनों ओर चामर धारिणी दासियाँ हैं। देवी के सिर पर एक लम्बा मुकुट है, जिसके सिरे पर एक छत्र है और उसके ऊपरी भाग पर एक वृक्ष प्रदर्शित है। प्रतिमा के ऊपरी भाग में दोनों ओर आकाशचारी विद्याधर हैं। दाढ़ी युक्त ऋषियों तथा सेवकों की आकृतियाँ पंक्तिबद्ध मुख्य मूर्ति के दोनों ओर खड़ी हैं। वज्रासन मुद्रा में बुद्ध मूर्ति का जैसा महत्त्व बोधिवृक्ष से है, वैसा ही महत्त्व यहाँ देवी की प्रतिमा का वृक्ष से लगता है, अर्थात् यह वृक्ष सम्भवतः ज्ञान का महत्त्व प्रदर्शित करता है।

३—मुहरों पर सरस्वती

मूर्तियों के अतिरिक्त कुछ ठप्पों (मुहर Seals) पर भी सरस्वती का चित्रण प्राप्त हुआ है। इस प्रकार की एक गोलाकार मुहर (फलक ११) भीटा से प्राप्त हुई है, जिसमें आधार के ऊपर एक भद्रघट प्रदर्शित है और नीचे गुप्तकालीन लिपि में "सरस्वती" अंकित है[१]। मागध—गुप्त काल के बंगाल के एक राजा नरेन्द्र-विनत की मुद्राओं में भी एक देवी चित्रित है, जो आभंग मुद्रा में खड़ी हैं। कुछ विद्वानों के अनुसार संभवतः यह देवी सरस्वती का ही चित्र है।[२]

भारत के अतिरिक्त कुछ अन्य देशों में भी सरस्वती की प्रतिमायें प्राप्त हुई है, विशेषकर उन देशों में जहाँ-जहाँ बौद्ध धर्म का प्रचार हुआ जैसे तिब्बत, जापान, जावा तथा पूर्वी द्वीप समूह[३]। ये प्रतिमायें सुन्दर तथा कला पूर्ण हैं। जिस तरह भारत में सरस्वती नदी दार्शनिक रूप से ईश्वर के ज्ञान का स्रोत कही जाती हैं तथा विद्या और ज्ञान की देवी मानी गयी हैं, उसी तरह इन्हें लोगस (Logos) कहा गया है, जिसका पर्यायवाची भारतीय शब्द है वाक् अर्थात् वाणी या वाणी की देवी।[४]

—o—

[१] Archaeological Survey of India Annual Report, 1911-12, page 50, plate XVIII.

[२] J. N. Banerjea, *Development of Hindu Iconograplry*, p. 265.

[३] Das Gupta, S. B., *Aspects of Indian Religous Thoughts*, p. 55.

[४] वही

परिशिष्ट–१

'सरस्वती' शब्द की व्युत्पत्ति

सरस्वती शब्द की व्युत्पत्ति जानने के लिए यह जानना आवश्यक है कि यह शब्द किस धातु और किस प्रत्यय से निर्मित हुआ। अमर कोश में लिखा है :

ब्राह्मी तु भारती भाषा गीर्वाग्वाणी सरस्वती।
व्याहार उक्तिर्लपितं भाषितं वचनं वचः॥

महा वैयाकरण पाणिनि के अनुसार इसकी सिद्धि इस प्रकार से होती है। (१-६-१)

"सृगतौ इत्यस्मात् औणादिको स प्रत्ययः।
स्रियते गम्यते येन तत्सरः ज्ञानम्॥
सरोऽस्या अस्तीति सरस्वती। सरस्+मतुप्।
तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इति पाणिनि सूत्रेण मतुप्प्रत्ययः।
मादुपधायाश्च मतोर्व इति सरस्वत्-मकारस्य वकारादेश स्त्रीत्वविवक्षायां
उगितश्चेति पाणिनि सूत्रेण ङीपि प्रत्यये सति सरस्वती शब्दो निष्पद्यते॥"

अर्थात्—

"सृ" धातु गति अर्थ में है, जिससे करण अर्थ में "सर्वधातुभ्यो सुम्" (उणादि ४ पाद) सूत्र से असुन प्रत्यय हुआ। "उकार" तथा "नकार" का लोप हो जाने से शेष सृ+अस् रहा। "सार्वधातुकार्धधातुकयोः" सूत्र से सृ के ऋकार का अ हो गया और "उरण रपरः" सूत्र से अ के बाद र आ गया। इस प्रकार सर+अस् बना। र् हल है। अतः अ में वह संयुक्त हो गया। इस प्रकार यह सरस् बना। "स्रियते गम्यते अनेनेति तत् सरः ज्ञानम्"—अर्थात् सरस्-ज्ञान-जिसका या जिसमें हों, उसे सरस्वती कहा गया है (या जिसमें सरस ज्ञान हो वही सरस्वती हैं)।

सरस् शब्द से पाणिनि के "तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्" सूत्र से मतुप् प्रत्यय हुआ अर्थात् सरस्+मतुप् बना। इसम से "उकार" तथा "पकार" को निकाल देने से सरस्+मत् शेष रहा। "मादुपधायाश्च मतोर्वो य वादिभ्यः" सूत्र के अनसार म का व हो जाता है, जिससे सरस्+वत् हुआ। "उगितश्च' स्त्री प्रत्यय के सूत्र से ङीप (ई) प्रत्यय आ गया। ङीप के ङ और प के लोप हो जाने से केवल ई शेष रहा। अतः सरस्वत् से संयुक्त होकर सरस्वती शब्द बना। सरस्वती शब्द को पद बनाने के लिए "ङ्याप्प्रातिपदिकात्" सूत्र से प्रथमा का एक वचन सूप्रत्यय आया। "उकार" का लोप हो गया और तब सरस्वती+स् बना। "हल्ङ्याब्भ्यो-दीर्घात्सुतिस्य पृक्तं हल्" पाणिनि के सूत्र के अनुसार प्रत्यय "सकार" का लोप हो गया। इस तरह सरस्वती शब्द पद संज्ञक बन गया। संक्षेप में इसे निम्नलिखित ढंग से स्पष्ट किया जा सकता है :—

सृ	सरस्+वत्
सृ+असुन्	सरस्वत्
सृ+अस्	सरस्वत्+ङीप
सर्+अस्	सरस्वत+ई

सरस्	सरस्वती
सरस्+मतुप्	सरस्वती+सु
सरस्+मत्	सरस्वती-(पद)

सरस्वती शब्द की व्युत्पत्ति के साथ ही कुछ शंकायें भी सामने आती हैं। "ननु सुबन्तात्तद्धितोपत्तिर्भवतीतिसिद्धान्ते अन्तर्वर्तिविभक्तिमादाय प्रत्ययलोपेप्रत्ययलक्षणमित्यनेन पदत्वे ससजुषोरुरिति सूत्रेण रुत्वे कृते पुनश्च हशिचति सूत्रेण उत्वे गुणे च कृते सरोवती इति भवतु—कथं सरस्वती इति चेत् उच्यते" सूत्र के अनुसार यदि सुबन्त से तद्धित की उत्पत्ति होती है तो ऐसे पाणिनीय-सिद्धान्त से यहाँ अन्तर्वर्ति-विभक्ति को लेकर प्रत्यय के लोप होने की स्थिति में प्रत्यय को मान कर कार्य होता है। इस नियम से सरस् पद हुआ। अतः पद के अन्त के स "ससजुषोरु" सूत्र से रु होता है और रु को "हशिच" सूत्र से उ होता है। इस प्रकार अ+उ से ओ बनता है। इस सिद्धान्त से "सरस्वती" की जगह "सरोवती" बनता है।

सरस्+वती	सरो+वती
सररु+वती	सरोवती
सरउ+वती	

किन्तु यह शंका निर्मूल है। इसका समाधान आचार्य पाणिनि "तसोमत्यर्थे—इति सूत्रेण सरस् इत्यस्य भसंज्ञायां पदत्व बाधे रुत्वाभाव इति नाऽस्ति सरोवती इति विसृ पस्पावसरः" से करते हैं। अर्थात् तकारान्त सकारान्त को पद संज्ञा न होकर भ संज्ञा होती है। पद संज्ञा न होने से ऊपर का सूत्र रु न होगा और तब उ तथा ओकार न आयेगा। अतः "सरोवती" शब्द नहीं बन सकता। शब्द "सरस्वती" ही बनेगा।

अमरकोश की टीका करते समय भानुजी दीक्षित का कथन है:

"सरति गच्छति वहति यत्तत् सरः जलम् कर्तरि असु प्रत्यये कृते सति सरस्
शब्दो जलार्थ कोऽपि दृश्यते। तदातु सरस्वान् इत्यस्य जलवान् इत्यर्थः स्यात्।
एवं च स्त्रीत्व विवक्षायां सरस्वती अर्थात् जलवती नदी इत्यर्थोऽपि संगच्छते एव
तदा तुयोगरूढ़मिदं पदं बोध्यम्।"

अर्थात्—

यदि कर्ता अर्थ में सृ धातु से असुन् प्रत्यय करें तो "सरति गच्छति वहति यत्तत् सरः जलम्" के अनुसार जो सरकता है, चलता है, वहता है वह जल है और वह जिसमें है, उसे सरस्वान् या जलवान् कह सकते हैं। स्त्रीलिंग की विविक्षा में ङीप (ई) प्रत्यय द्वारा जलवती अथवा सरस्वती नदी भी युक्ति संगत अर्थ होता है। उस समय यह शब्द योगरूढ़ होगा। अर्थात् जिस प्रकार पंकज शब्द का वास्तविक अर्थ है "कीचड़ से उत्पन्न" किन्तु उसका प्रयोग केवल "कमल" के लिए होता है, उसी प्रकार सरस्वती शब्द के अनेक अर्थ हैं, पर उसे नदी या ब्रह्मा की शक्ति के रूप में ही प्रयोग किया जाता है।

———

परिशिष्ट—२

सरस् शब्द के अर्थ

वाचस्पत्यम् कोश में सरस्वत् शब्द के निम्नलिखित १७ अर्थ वर्णित हैं :—

(क) सरोवर

(ख) सागर

(ग) नद

(घ) रसिक[1] (तीनों लिंगों में—अर्थात् सरस्वान्, सरस्वती, सरस्वत्)

(ङ) नदी

(च) वाणी

(छ) गौ

(ज) स्त्रीरत्न (तीनों लिंगों में)

(झ) ज्योतिष्मती

(ञ) ब्राह्मी नामक[2] शक्ति

(ट) देवी का विशेष भेद[1]

(ठ) सोम लता[3]

(ड) बुद्धि-शक्ति-भेद[4]

(ढ) दुर्गा

(ण) वाणी की अधिष्ठातृ देवता

(त) सन्ध्या काल के उपास्य देवता[5]

(थ) विशेष नदी

भानुजी दीक्षित की एक व्याख्या के अनुसार इसका अर्थ मनु की पत्नी भी होता है।

"सरस्वांस्तु नदे वार्धौ ना न्यवसद्रसिके स्त्रियाम्। वाणी स्त्री रत्न

वाग्देवी गो नदीषु नदीमिदि। मनु पत्न्यामपि.........'.....'

---

[1] मेदिनी कोश

[2] राज निघन्टु

[3] शब्दक

[4] त्रिका

[5] "गायत्री नाम पूर्वाह्णे सावित्री मध्यमे दिने सरस्वती तु सायाह्ने।"

परिशिष्ट—३

सरस्वती देवी संबंधी कतिपय मूल साहित्यिक संदर्भ

मण्डल—१०। सूक्त—१२५—ऋग्वेद

(देखिये अध्याय २—पृष्ठ—२७)

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वदेवैः ।
अहं मित्रावरुणोभा बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा ॥१॥
अहं सोम माहनसं बिभर्म्यहं त्वष्टारमुत पूषणं भगम् ।
अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते ॥२॥
अहं राष्ट्री संगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् ।
तां मा देवाव्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रां भूर्यावेशयन्तीम् ॥३॥
मया सो अन्नमत्ति यो विपश्यति यः प्राणिति य ईं शृणोत्युक्तम् ।
अमन्तवो मान्त उपक्षियन्ति श्रुधि श्रुतः श्रुद्धिवं ते वदामि ॥४॥
अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः ।
यं कामये तन्तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम् ॥५॥
अहं रुद्राय धनुरातनोमि ब्रह्मद्विषे शरवे हन्तवा उ ।
अहं जनाय समदं कृणोम्यहं द्यावापृथिवी आविवेश ॥६॥
अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे ।
ततो वितिष्ठे भुवनानु विश्वोतामूं द्यां वर्ष्मणोप स्पृशामि ॥७॥
अहमेव वातइव प्र वाम्यारभमाणा भुवनानि विश्वा ।
परो दिवा पर एना पृथिव्यैतावती महिना संबभूव ॥८॥

अर्थ :—

१—मैं रुद्रों और वसुओं के साथ विचरण करती हूँ। मैं आदित्यों और देवों के साथ रहती हूँ। मैं मित्र और वरुणों को धारण करती हूँ। मैं इन्द्र, अग्नि और अश्विनिद्वय का अवलम्बन करती हूँ।

२ जो सोम प्रस्तर से पीसे जाकर उत्पन्न होते हैं, उन्हें मैं ही धारण करती हूँ, मैं त्वष्टा, पूषा और भग को धारण करती हूँ। जो यजमान यज्ञसामग्री का आयोजन करके और सोमरस प्रस्तुत करके देवों को भली-भाँति सन्तुष्ट करता है, उसे मैं ही धन देती हूँ।

३—मैं राज्य की अधीश्वरी हूँ और धन देने वाली हूँ। मैं ज्ञानवती हूँ और यज्ञोपयोगी वस्तुओं में श्रेष्ठ हूँ। देवो ने मुझे नाना स्थानों में रखा है। मेरा आश्रय स्थान विशाल है। मैं सब प्राणियों में आविष्ट हूँ।

४—जो प्राण धारण करता है, देखता, सुनता और अन्न भोग करता है, वह मेरी सहायता से ही यह सब कार्य करता है। जो मुझे नहीं मानते, वे क्षीण हो जाते हैं। विज्ञ सुनो, जो मैं कहती हूँ, वह श्रद्धेय है।

५—देवता और मनुष्य जिसकी शरण में जाते हैं, उसको मैं ही उपदेश देती हूँ। मैं जिसे चाहूँ उसे बली, स्तोता, ऋषि अथवा बुद्धिमान कर सकती हूँ।

६—जिस समय इन्द्र-स्तोत्र द्रोही शत्रु का बध करने को उद्यत होते हैं, उस समय मैं उनके धनुष का विस्तार करती हूँ। मनुष्य के लिये मैं ही युद्ध करती हूँ, मैं द्यावापृथिवी में व्याप्त हूँ।

७ - मैं पिता हूँ। मैंने आकाश को उत्पन्न किया है। वह आकाश इस संसार का मस्तक है। समुद्र-जल में मेरा स्थान है। उसी स्थान से मैं सारे संसार में विस्तृत होती हूँ। मैं अपनी उन्मत्त देह से इस द्युलोक को छूती हूँ।

८—मैं ही भुवन निर्माण करते-करते वायु के समान बहती हूँ। मेरी महिमा ऐसी बड़ी है कि मैं द्यावापृथिवी का अतिक्रम कर चुकी हूँ।

ऋग्वेदः

इयमददाद्रभसमृणच्युतं दिवोदासं वध्र्यश्वाय दाशुषे।
या शश्वन्तमाचखादावसं पणिं ता ते दात्राणि तविषा सरस्वति ॥१॥
इयं शुष्मेभिर्बिसखा इवारुजत्सानु गिरीणां तविषेभिरूर्मिभिः।
पारावतघ्नीमवसे सुवृक्तिभिः सरस्वतीमा विवासेम धीतिभिः ॥२॥
सरस्वति देवनिदो निबर्हय प्रजां विश्वस्य बृसयस्य मायिनः।
उत क्षितिभ्योऽवनीरविन्दो विषमेभ्यो अस्रवो वाजिनीवति ॥३॥
प्र णो देवी सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती।
धीनामवित्र्यवतु ॥४॥
यस्त्वा देवि सरस्वत्युपब्रूते धने हिते।
इन्द्रं न वृत्रतूर्ये ॥५॥
त्वं देवि सरस्वत्यवा वाजेषु वाजिनि।
रदा पूषेव नः सनिम् ॥६॥
उतस्या नः सरस्वती घोरा हिरण्यवर्तनिः।
वृत्रघ्नी वष्टि सुष्टुतिम् ॥७॥
यस्या अनन्तो अह्रुतस्त्वेषश्चरिष्णुरर्णवः।
अमश्चरति रोरुवत् ॥८॥
सा नो विश्वा अति द्विषः स्वसॄरन्या ऋतावरी।
अतन्नहेव सूर्यः ॥९॥
उत नः प्रिया प्रियासु सप्तस्वसा सुजुष्टा।
सरस्वती स्तोम्या भूत् ॥१०॥
आपप्रुषी पार्थिवान्युरु रजो अन्तरिक्षम्।
सरस्वती निदस्पातु ॥११॥
त्रिषधस्था सप्तधातुः पञ्चजाता वर्धयन्ती।
वाजेवाजे हव्या भूत् ॥१२॥

प्र या महिम्ना महिनासु चेकिते द्युम्नेभिरन्या अपसामपस्तमा।
रथ इव बृहती विभ्वने कृतोपस्तुत्या चिकितुषा सरस्वती ॥१३॥
सरस्वत्यभि नो नेषि वस्यो माप स्फरीः पयसा मा न आ धक्।
जुषस्व नः सख्या वेश्या च मा त्वत्क्षेत्राण्यरणानि गन्म ॥१४॥
(मंडल ६, सूक्त ६१)

प्र क्षोदसा धायसा सस्र एषा सरस्वती धरुणमायसी पूः।
प्रबाबधाना रथ्येव याति विश्वा अपो महिना सिन्धुरन्याः ॥१॥
एकाचेतत्सरस्वती नदीनां शुचिर्यती गिरिभ्य आ समुद्रात्।
रायश्चेतन्ती भुवनस्य भूरेर्घृतं पयो दुदुहे नाहुषाय ॥२॥
स वावृधे नर्यो योषणासु वृषा शिशुर्वृषभो यज्ञियासु।
सा वाजिनं मघवद्भ्यो दधाति वि सातये तन्वं मामृजीत ॥३॥
उत स्या नः सरस्वती जुषाणाप श्रवत्सुभगा यज्ञे अस्मिन्।
मितज्ञुभिर्नमस्यैरियाना राया युजा चिदुत्तरा सखिभ्यः ॥४॥
इमा जुह्वाना युष्मदा नमोभिः प्रति स्तोमं सरस्वति जुषस्व।
तव शर्मन्प्रियतमे दधाना उप स्थेयाम शरणं न वृक्षम् ॥५॥
अयमु ते सरस्वति वसिष्ठो द्वारावृतस्य सुभगे व्यावः।
वर्ध शुभ्रे स्तुवते रासि वाजान्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥ (७।९५)

बृहदु गायिषे वचोऽसुर्या नदीनाम्।
सरस्वतीमिन्महया सुवृक्तिभिः स्तोमैर्वसिष्ठ रोदसी ॥१॥
उभे यत्ते महिना शुभ्रे अन्धसी अधिक्षियन्ति पूरवः।
सा नो बोध्यवित्री मरुत्सखा चोद राधो मघानाम् ॥२॥
भद्रमिद्भद्रा कृणवत्सरस्वत्यकवारी चेतति वाजिनीवती।
गृणाना जमदग्निवत्स्तुवाना च वसिष्ठवत् ॥३॥
जनीयन्तो न्वग्रवः पुत्रीयन्तः सुदानवः।
सरस्वन्तं हवामहे ॥४॥
ये ते सरस्व ऊर्मयो मधुमन्तो घृतश्चुतः।
तेभिर्नोऽविता भव ॥५॥
पीपिवांसं सरस्वतः स्तनं यो विश्वदर्शतः।
भक्षीमहि प्रजामिषम् ॥६॥ (७।९६)

पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती।
यज्ञं वष्टु धियावसुः ॥१०॥
चोदयित्री सूनृतानां चेतन्ती सुमतीनाम्।
यज्ञं दधे सरस्वती ॥११॥
महो अर्णः सरस्वती प्र चेतयति केतुना।
धियो विश्वा वि राजति ॥१२॥ (मण्डल १, सूक्त ३)

अम्बितमे नदीतमे देवितमे सरस्वति ।
अप्रशस्ता इव स्मसि प्रशस्तिमम्ब नस्कृधि ॥१६॥
ते विश्वा सरस्वति श्रितायूंषि देव्याम् ।
शुनहोत्रेषु मत्स्व प्रजां देवि दिदिड्ढि नः ॥१७॥
इमा ब्रह्म सरस्वति जुषस्व वाजिनीवति ।
या ते मन्म गृत्समदा ऋतावरि प्रिया देवेषु जुह्वति ॥१८॥
(मण्डल २, सूक्त ४१)

इन्द्रो वा घेदियन्मघं सरस्वती वा सुभगा ददिर्वसु ।
त्वं वा चित्र दाशुषे ॥१७॥
चित्र इद्राजा राजका इदन्यके यके सरस्वतीमनु ।
पर्जन्य इव ततनद्धि वृष्ट्या सहस्रमयुता ददत् ॥१८॥
(मण्डल ८, सूक्त २१)

ब्राह्मण ग्रंथों के कुछ वाक्य

(१) इत्याश्राव्याहाश्विनौ सरस्वतीमिन्द्रं सुत्रामाणं यजेति । शतपथ ब्राह्मण ५,५,४,२५

(२) वाक् सरस्वती ।

शतपथ ब्रा० ७,५,१,३१; ११,२,४,९; १२,९,१,१३ ।

(३) वाग्वै सरस्वती ।

कौषीतकी ब्रा० ५,२; १२,८; १४,४; ताण्ड्य ब्रा० ६,७,७; १६,५,१६; शतपथ ब्रा० २,५,४,६; ३,९, १,७; तैत्तिरीय ब्रा० १,३,४,५, ३,८,११,२; गोपथ ब्रा० उत्तरभाग १,२०

(४) वाग्वै सरस्वती पावीरवी । ऐतरेय ब्रा० ३,३७

(५) वागेव सरस्वती । ऐतरेय ब्रा० २,२४; ६,७

(६) वाग्घि सरस्वती । ऐतरेय ब्रा० ३,२

(७) वाक्तु सरस्वती । ऐतरेय ब्रा० ३।१

(८) सरस्वती वाचमदधात् । तैत्तिरीय ब्रा० १,६,२,२

(९) अथ यत्स्फूर्जयन्वाचमिव वदन्दहति तदस्य (अग्नेः) सारस्वतं रूपम् । ऐतरेय ब्रा० ३,४

(१०) सा (वाक्) ऊर्ध्वोदातनोद्यथापां धारा संततैवम् (सरस्वती) [नदी]=वाक् । ताण्ड्य ब्रा० २०, १४,२

(११) जिह्वा सरस्वती । शतपथ ब्रा० १२,९,१,१४

(१२) सरस्वती हि गौः । शतपथ ब्रा० १४,२,१,७

(१३) अमावस्या वै सरस्वती । गोपथ ब्रा० उत्तरभाग १,१२

(१४) सारस्वतं मेषम् (आलभते) । तैत्तिरीय ब्रा० १,८,५,६

(१५) अविर्मल्हा (='गलस्तनयुता' इति सायणः) सारस्वती । शतपथ ब्रा० ५,५,४,१

(१६) वर्षाशरदौ सारस्वताभ्याम् (अवरुन्धे) । शतपथ ब्रा० १२,६,२,३४

(१७) योषा वै सरस्वती वृषा पूषा । शतपथ ब्रा० २,५,१,११

(१८) सरस्वती (श्रियः) पुष्टिम् (आदत्त)। शतपथ ब्रा० ११,४,३,३
(१९) सरस्वती पुष्टिः पुष्टिपत्नी। तैत्तिरीय ब्रा० २,५,७,४; शतपथ ब्रा० ११,४,३,१६
(२०) सर्वे प्रैषाः सारस्वता अन्नाद्यस्यैवावरुद्ध्यै। शतपथ ब्रा० १२,८,२,१६
(२१) एषा वा अपां पृष्ठं यत्सरस्वती। तैत्तिरीय ब्रा० १,७,५,५
(२२) ऋक्सामे वै सारस्वतावुत्सौ! तैत्तिरीय ब्रा० १,४,४,९
(२३) सरस्वत्यै दधि। शतपथ ब्रा० ४,२,५,२२
(२४) अन्तरिक्षं सारस्वतेन (अवरुन्धे)। शतपथ ब्रा० १२,८,२,३२
(२५) सरस्वतीतितद् द्वितीयं वज्ररूपम्। कौषीतकी ब्रा० १२,२
(२६) अथ यत् (अक्ष्योः) कृष्णं तत्सारस्वतम्। शतपथ ब्रा० १२,९,१,१२
(२७) सरस्वती वाचमदधात्। तैत्तिरीय ब्रा० १,६,२,२

(हंसराजकृत वैदिककोश के आधार पर)

देवी भागवत पुराण

सरस्वती पुण्यक्षेत्रमाजगाम च भारते।
गङ्गाशापेन कलया स्वयं तस्थौ हरेः पदे ॥१॥
भारती भारतं गत्वा ब्राह्मी च ब्रह्मणः प्रिया।
वाण्यधिष्ठातृदेवी सा तेन वाणी प्रकीर्तिता ॥२॥
सरीवाप्यां च स्रोतस्सु सर्वत्रैव हि दृश्यते।
हरिः सरस्वान् तस्येयं तेन नाम्ना सरस्वती ॥३॥
सरस्वती नदी सा च तीर्थरूपाऽतिपावनी।
पापिनां पापदाहाय ज्वलदग्निस्वरूपिणी ॥४॥ (स्कन्ध ९, अध्याय ७)

देवी भागवत पुराण

एतस्मिन्नन्तरे देवीजिह्वाग्रात्सहसा ततः।
आविर्बभूव कन्यैका शुक्लवर्णा मनोहरा ॥
श्वेतवस्त्रपरीधाना वीणापुस्तकधारिणी।
रत्नभूषणभूषाढ्या सर्वशास्त्राधिदेवता ॥
अथ कालान्तरे सा च द्विधारूप बभूव ह।
वामार्धाङ्गाच्च कमला दक्षिणार्धाच्च राधिका ॥ (स्कन्ध ९, अध्याय २)
आदौ सरस्वतीपूजा श्रीकृष्णेन विनिर्मिता।
यत्प्रसादान्मुनिश्रेष्ठ! मूर्खोभवति पण्डितः ॥१०॥
आविर्भूता यथा देवी वक्त्रतः कृष्णयोषितः।
इयेष कृष्णं कामेन कामुकीकामरूपिणी ॥११॥
स च विज्ञाय तद्भावं सर्वज्ञः सर्वमातरम्।
तामुवाच हितं सत्यं परिणामे सुखावहम् ॥१२॥

श्रीकृष्ण उवाच

भज नारायणं साध्वि ! मदंशं च चतुर्भुजम् ।
युवानं सुन्दरं सर्वगुणयुक्तं च मत्समम् ॥१३॥
कामज्ञं कामिनीनां च तासां च कामपूरकम् ।
कोटिकन्दर्पलावण्यलीलालङ्कृतमीश्वरम् ॥१४॥
त्वं भद्रे ! गच्छ वैकुण्ठं तव भद्रं भविष्यति ।
पतिं तमीश्वरं कृत्वा मोदस्व सुचिरं सुखम् ॥१९॥
लोभमोहकामक्रोधमानहिंसाविवर्जिता ।
तेजसा त्वत्समा लक्ष्मी रूपेण च गुणेन च ॥२०॥
तया सार्धं तव प्रीत्या शश्वत्कालः प्रयास्यति ।
गौरवं च हरिस्तुल्यं करिष्यति द्वयोरपि ॥२१॥
प्रतिविश्वेषु तां पूजां महतीं गौरवान्विताम् ।
माघस्य शुक्लपञ्चम्यां विद्यारम्भे च सुन्दरि ॥२२॥
मानवा मानवो देवा मुनीन्द्राश्च मुमुक्षवः ।
वसवो योगिनः सिद्धा नागा गन्धर्वराक्षसाः ॥२३॥
मद्वरेण करिष्यन्ति कल्पे कल्पे लयावधि ।
भक्तियुक्ताश्च दत्त्वा वै चोपचाराणि षोडश ॥२४॥
कण्वशाखोक्तविधिना ध्यानेन स्तवनेन च ।
जितेन्द्रियाः संयताश्च घटे पुस्तकेऽपि च ॥२५॥
कृत्वा सुवर्णगुटिका गन्धचन्दनचर्चिताम् ।
कवचं ते ग्रहीष्यन्ति कण्ठे वा दक्षिणे भुजे ॥२६॥
पठिष्यन्ति च विद्वांसः पूजाकाले च पूजिते ।
इत्युक्त्वा पूजयामास तां देवीं सर्वपूजितम् ॥२७॥
ततस्तत्पूजनं चक्रुर्ब्रह्मविष्णुशिवादयः ।
अनन्तश्चापि धर्मश्च मुनीन्द्राः सनकादयः ॥२८॥
सर्वे देवाश्च मुनयो नृपाश्च मानवादयः ।
बभूव पूजिता नित्या सर्वलोकैः सरस्वती ॥२९॥

श्रीभगवानुवाच

शृणु नारद ! वक्ष्यामि कण्वशाखोक्तपद्धतिम् ।
जगन्मातुः सरस्वत्याः पूजाविधिसमन्विताम् ॥३२॥
माघस्य शुक्लपञ्चम्यां विद्यारम्भे दिनेऽपि च ।
पूर्वेऽह्नि समयं कृत्वा तत्राह्निसंयतः शुचिः ॥३३॥
स्नात्वा नित्यक्रियाः कृत्वा घटं संस्थाप्य भक्तितः ।
स्वशाखोक्तविधानेन तान्त्रिकेणाऽथवा पुनः ॥३४॥

गणेशम्पूर्वमभ्यर्च्य ततोऽभीष्टां प्रपूजयेत् ।
ध्यानेन वक्ष्यमाणेन ध्यात्वाऽऽवाह्यघटे ध्रुवम् ॥३५॥
ध्यात्वा पुनः षोडशोपचारेण पूजयेद्व्रती ।
पूजोपयुक्तनैवेद्यं यच्च वेदे निरूपितम् ॥३६॥
संस्तूय कवचं धृत्वा प्रणमेद्दण्डवद्भुवि ॥४९॥

सरस्वतीकवच (ब्रह्मा द्वारा भृगु से कथित)

कवचस्यास्यविप्रेन्द्र ऋषिरेव प्रजापतिः ।
स्वयं छन्दश्च बृहती देवता शारदाऽम्बिका ॥७१॥
सर्वतत्त्वपरिज्ञानसर्वार्थसाधनेषु च ।
कवितासु च सर्वासु विनियोगः प्रकीर्तितः ॥७२॥
श्रीं ह्रीं सरस्वत्यै स्वाहा शिरो मे पातु सर्वतः ।
श्रीं वाग्देवतायै स्वाहाभालं मे सर्वदाऽवतु ॥७३॥
ॐ ह्रीं सरस्वत्यै स्वाहेति श्रोत्रे पातु निरन्तरम् ।
ॐ श्रीं ह्रीं भगवत्यै सरस्वत्यै स्वाहा नेत्रयुग्मं सदाऽवतु ॥७४॥
ॐ ऐं ह्रीं वाग्वादिन्यै स्वाहा नासां मे सर्वदाऽवतु ।
ॐ ह्रीं विद्याधिष्ठातृदेव्यै स्वाहा चोष्ठं सदाऽवतु ॥७५॥
ॐ श्रीं ह्रीं ब्राह्म्यै स्वाहेति दन्तपंक्तिं सदाऽवतु ।
ऐमित्येकाक्षरो मन्त्रो मम कण्ठं सदाऽवतु ॥७६॥
ॐ श्रीं ह्रीं पातु मे ग्रीवां स्कन्धौ मे श्रीं सदाऽवतु ।
ॐ ह्रीं विद्याधिष्ठातृदेव्यै स्वाहा वक्षः सदाऽवतु ॥७७॥
ॐ ह्रीं विद्याधिस्वरूपायै स्वाहा मे पातु नाभिकम् ।
ॐ ह्रीं क्लीं वाण्यै स्वाहेति मम हस्तौ सदाऽवतु ॥७८॥
ॐ सर्ववर्णात्मिकायै पादयुग्मं सदाऽवतु ।
ॐ वागधिष्ठातृदेव्यै स्वाहा मां सर्वदाऽवतु ॥७९॥
ॐ सर्वकण्ठवासिन्यै स्वाहा प्राच्यां सदाऽवतु ।
ॐ सर्वजिह्वाग्रवासिन्यै स्वाहाऽग्निदिशि रक्षतु ॥८०॥
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सरस्वत्यै बुधजनन्यै स्वाहा ।
सततं मन्त्रराजोऽयं दक्षिणे मां सदाऽवतु ॥८१॥
ऐं ह्रीं श्रीं त्र्यक्षरो मन्त्रो नैऋत्यां सर्वदाऽवतु ।
ॐ ऐं जिह्वाग्रवासिन्यै स्वाहा मां वारुणेऽवतु ॥८२॥
ॐ सर्वाम्बिकायै स्वाहा वायव्ये मां सदाऽवतु ।
ॐ ऐं श्रीं क्लीं गद्यवासिन्यै स्वाहामामुत्तरेऽवतु ॥८३॥
ऐं सर्वशास्त्रवासिन्यै स्वाहैशान्यां सदाऽवतु ।
ॐ ह्रीं सर्वपूजितायै स्वाहा चोर्ध्वं सदाऽवतु ॥८४॥
ह्रीं पुस्तकवासिन्यै स्वाहाऽधो मां सदाऽवतु ।
ॐ ग्रन्थबीजस्वरूपायै स्वाहा मां सर्वतोऽवतु ॥८५॥ (स्कन्ध ९, अध्याय ४)

ब्रह्मवैवर्तपुराण

एतस्मिन्नन्तरे देवी जिह्वाग्रात् सहसा ततः ।
आविर्बभूव कन्यैका शुक्लवर्णा मनोहरा ॥५४॥
पीतवस्त्रपरीधाना वीणापुस्तकधारिणी ।
रत्नभूषणभूषाढ्या सर्वशास्त्राधिदेवता ॥५५॥ (प्रकृतिखण्ड, अध्याय २)
शक्तिर्द्वितीया कथिता वेदोक्ता सर्वसम्मता ।
सर्वपूज्या सर्ववन्द्या चान्यां मत्तोनिशामय ॥२९॥
वाग्बुद्धिविद्याज्ञानाधिदेवता परमात्मनः ।
सर्वविद्यास्वरूपा या सा च देवी सरस्वती ॥३०॥
सुबुद्धिकवितामेधाप्रतिभास्मृतिदा सताम् ।
नानाप्रकारसिद्धान्तभेदार्थकल्पनाप्रदा ॥३१॥
व्याख्याबोधस्वरूपा च सर्वसंदेहभञ्जिनी ।
विचारकारिणी ग्रन्थकारिणी शक्तिरूपिणी ॥३२॥
सर्वसङ्गीतसन्धानतालकारणरूपिणी ।
विषयज्ञानवाग्रूपा प्रतिविश्वेषु जीविनाम् ॥३३॥
व्याख्यामुद्राकरा शान्ता वीणापुस्तकधारिणी ।
शुद्धसत्त्वस्वरूपा या सुशीला श्रीहरिप्रिया ॥३४॥
हिमचन्दनकुन्देन्दुकुमुदाम्भोजसन्निभा ।
जपन्ती परमात्मानं श्रीकृष्णं रत्नमालया ॥३५॥
तपःस्वरूपा तपसां फलदात्री तपस्विनी ।
सिद्धिविद्यास्वरूपा च सर्वसिद्धिप्रदा सदा ॥३६॥

विष्णुधर्मोत्तरपुराण

देवी सरस्वती कार्या सर्वाभरणभूषिता ।
चतुर्भुजा सा कर्तव्या तथैव च समुत्थिता ॥१॥
पुस्तकं चाक्षमालां च तस्या दक्षिणहस्तयोः ।
वामयोश्च तथा कार्या वैष्णवी च कमण्डलुः ॥२॥
समपादप्रतिष्ठा च कार्या सोममुखी तथा ।
वेदास्तस्य भुजा ज्ञेयाः सर्वशास्त्राणि पुस्तकम् ॥३॥
सर्वशास्त्रामृतरसो देव्या ज्ञेयः कमण्डलुः ।
अक्षमाला करे तस्याः कलो भवति पार्थिव ॥४॥
सिद्धिर्मूर्तिमती ज्ञेया वैष्णवी नात्र संशयः ।
सावित्रीवदनं तस्याः सर्वाद्या परिकीर्तिता ॥५॥
चन्द्रार्कलोचना ज्ञेया सा च राजीवलोचना ॥६॥
सारस्वतं ते कथितं मयैतद्रूपं पवित्रं परमं मनोज्ञम् ।
ध्येयं च कार्यं च महीपमुख्य सर्वार्थसिद्धिं समभीप्समानैः ॥७॥ (खण्ड३, अध्याय६४)

स्कन्दपुराण

जटाजूटधरा शुद्धा चन्द्रार्धकृतशेखरा।
पुण्डरीकसमासीना नीलग्रीवा त्रिलोचना॥
(सूतसंहिता)

वामनपुराण

प्लक्षवृक्षात्समुद्भूता सरिच्छ्रेष्ठा सनातनी।
सर्वपापक्षयकरी स्मरणादपि नित्यशः॥३॥
सैषा शैलसहस्राणि विदार्य च महानदी।
प्रविष्टा पुण्यतोयैषा वनं द्वैतमिति श्रुतम्॥४॥
तस्मिन्प्लक्षे स्थितां दृष्ट्वा मार्कण्डेयो महामुनिः।
प्रणिपत्य तदा मूर्ध्ना तुष्टावाथ सरस्वतीम्॥५॥
त्वं देवि सर्वलोकानां माता देवारणिः शुभा।
सदसद्देवि यत्किञ्चिन्मोक्षवोधाय यत्पदम्॥६॥
यथा जलं सागरे हि तथा तत्त्वयि संस्थितम्।
अक्षरं परमं ब्रह्म विश्वं चैतत्क्षरात्मकम्॥७॥
दारुण्यवस्थितो वह्निर्भूमौ गन्धो यथा ध्रुवम्।
तथा त्वयि स्थितं ब्रह्म जगच्चेदमशेषतः॥८॥
ॐकाराक्षरसंस्थानं यत्र देवि स्थिरास्थिरम्।
तत्र मात्रात्रयं सर्वमस्ति यद्देव नास्ति च॥९॥
त्रयो लोकास्त्रयो वेदास्त्रैविधं पावकत्रयम्।
त्रीणि ज्योतींषि वर्गाश्च त्रयो धर्मादयस्तथा॥१०॥
त्रयो गुणास्त्रयो वर्णास्त्रयो देवास्तथा क्रमात्।
त्रिधातवस्तथाऽवस्थाः पितरश्चाणिमादयः॥११॥
एतन्मात्रात्रयं देवि तव रूपं सरस्वति।
विभिन्नदर्शना आद्या ब्रह्मणो हि सनातनाः॥१२॥
सोमसंस्था हविःसंस्थाः पाकसंस्थाः सनातनाः।
तास्त्वदुच्चारणाद्देवि क्रियन्ते ब्रह्मवादिभिः॥१३॥
अनिर्देश्यं तथा चान्यदर्धमात्राश्रितं परम्।
अविकार्यक्षयं दिव्यं परिणामविवर्जितम्॥१४॥
तथैतत्परमं रूपं यन्न शक्यं मयोदितुम्।
न चास्ये न तथा जिह्वा ताल्वोष्ठादिभिरुच्यते॥१५॥
स विष्णुः स शिवो ब्रह्मा चन्द्रार्कज्योतिरेव च।
विश्वावासं विश्वरूपं विश्वात्मानं महेश्वरम्॥१६॥

साङ्ख्यसिद्धान्तवेदोक्तं बहुशाखास्थिरीकृतम्।
अनादिमध्यनिधनं सदसच्च सदैव तु ॥१७॥
एकं त्वनेकधाऽप्येकं भावभेदसमाश्रितम्।
अनाख्यं षड्गुणाख्यं च बह्वाख्यं त्रिगुणाश्रयम् ॥१८॥
नानाशक्तिविभावज्ञं नानाशक्तिविभावकम्।
सुखात्सौख्यरूपं तत्त्वगुणात्मकम् ॥१९॥
एवं देवि त्वया व्याप्तं निष्कलं सकलं जगत्।
अद्वैतावस्थितं ब्रह्म यच्च द्वैते व्यवस्थितम् ॥२०॥
येऽर्थानित्या ये विनश्यन्ति चान्ये येऽर्थाः
स्थूला ये विनश्यन्ति सूक्ष्माः।
ये वा भूमौ येऽन्तरिक्षेऽन्यतो वा तेषां
दृश्या सा त्वमेवोपलब्धिः ॥२१॥
यद्वा मूर्तं यच्च मूर्तं समस्तं यद्वा
भूतेष्वेव कर्मास्ति किञ्चित्।
यद्वा देवेष्वस्ति लेखेऽन्यतो वा तत्
संबद्धं त्वक्षरैर्व्यञ्जनैश्च ॥२२॥

(अध्याय ३२)

शिवमहापुराण

वायुरुवाच—

निवेदयामि जगतो वागर्थात्म्यं कृतं यथा।
षडध्ववेदनं सम्यक् समासान्नतु विस्तरात् ॥ १ ॥
नास्ति कश्चिदशब्दार्थो नापि शब्दो निरर्थकः।
ततो हि समये शब्दः सर्वः सर्वार्थबोधकः ॥ २ ॥
प्रकृतेः परिणामोऽयं द्विधा शब्दार्थभावना।
तामाहुः प्रकृतिं मूर्तिं शिवयोः परमात्मनोः ॥ ३ ॥
शब्दात्मिका विभूतिर्या सा त्रिधा कथ्यते बुधैः।
स्थूला सूक्ष्मा परा चेति स्थूला या श्रुतिगोचरा ॥ ४ ॥
सूक्ष्मा चिन्तामयी प्रोक्ता चिन्तया रहिता परा।
या शक्तिः सा परा शक्तिः शिवतत्त्वसमाश्रया ॥ ५ ॥
ज्ञानशक्तिसमायोगादिच्छोपोद्बलिका तथा।
सर्वशक्तिसमष्ट्यात्मा शक्तितत्त्वसमाख्यया ॥ ६ ॥
समस्तकार्यजातस्य मूलप्रकृतितां गता।
सैव कुण्डलिनी माया शुद्धाध्वपरमा सती ॥ ७ ॥
सा विभागस्वरूपैव षडध्वात्मा विजृम्भते।
तत्र शब्दास्त्रयोऽध्वानस्त्रयश्चार्थाः समीरिताः ॥ ८ ॥

सर्वेषामपि वै पुंसां नैजशुद्ध्यनुरूपतः ।
लययोगाधिकाराः स्युः सर्वतत्त्वविभागतः ॥ ९ ॥
कलाभिस्तानि तत्त्वानि व्याप्तान्येव यथातथम् ।
परस्याः प्रकृतेरादौ पञ्चधा परिणामतः ॥ १० ॥
कलाश्च ता निवृत्त्याद्याः पर्याप्ता इति निश्चयः ।
मन्त्राध्वा च पदाध्वा च वर्णाध्वा चेति शब्दतः ॥ ११ ॥
भुवनाध्वा च तत्त्वाध्वा कलाध्वा चार्थतः क्रमात् ।
अत्रान्योन्यं च सर्वेषां व्याप्यव्यापकतोच्यते ॥ १२ ॥
मन्त्राः सर्वैः पदैर्व्याप्ता वाक्याभावात्पदानि च ।
वर्णैर्वर्णसमूहं च पदमाहुर्विपश्चितः ॥ १३ ॥
वर्णास्तु भुवनैर्व्याप्तास्तेषां तेषूपलम्भनात् ।
भुवनान्यपि तत्त्वाद्यैरुत्पत्त्यान्तर्बहिष्क्रमात् ॥ १४ ॥
व्याप्तानि कारणैस्तत्त्वैरारब्धत्वादनेकशः ।
अन्तराद्युस्थितानीह भुवनानि तु कानिचित् ॥ १५ ॥
पौराणिकानि चान्यानि विज्ञेयानि शिवागमे ।
सांख्ययोगप्रसिद्धानि तत्त्वान्यपि च कानिचित् ॥ १६ ॥
शिवशास्त्रप्रसिद्धानि ततोऽन्यान्यपि कृत्स्नशः ।
कलाभिस्तानि तत्त्वानि व्याप्तान्येव यथातथम् ॥ १७ ॥
परस्याः प्रकृतेरादौ पञ्चधा परिणामतः ।
कलाश्च ता निवृत्त्याद्या व्याप्ताः पञ्च यथोत्तरम् ॥ १८ ॥
व्यापिकातः परा शक्तिरविभक्ता षडध्वनाम् ।
परप्रकृतिमात्रस्य तत्सत्त्वाच्छिवतत्त्वतः ॥ १९ ॥
शक्त्यादि च पृथिव्यन्तं शिवतत्त्वसमुद्भवम् ।
व्याप्तमेकेन तेनैव मृदा कुम्भादिकं यथा ॥ २० ॥
शैवं तत्परमं धाम यत्प्राप्यं षड्भिरध्वभिः ।
व्यापिकाव्यापिकाशक्तिः पञ्चतत्त्वविशोधनात् ॥ २१ ॥
निवृत्त्या रुद्रपर्यन्तं स्थितिरण्डस्य शोध्यते ।
प्रतिष्ठया तदूर्ध्वं तु यावदव्यक्तगोचरम् ॥ २२ ॥
तदूर्ध्वं विद्यया मध्ये यावद्विश्वेश्वरावधि ।
शान्त्या तदूर्ध्वमध्वान्ते विशुद्धिः शान्त्यतीतया ॥ २३ ॥
यामाहुः परमं व्योम परप्रकृतियोगतः ।
एतानि पञ्चतत्त्वानि यैर्व्याप्तमखिलं जगत् ॥ २४ ॥

(वायवीय संहिता, अध्याय २८)

मानसार

पद्मपीठोपरि स्थाप्य (पयित्वा) देवीं[१] पद्मासनासनाम् ।
शुद्धस्फटिकसंकाशं मुक्ताभरणभूषणम् ॥३॥
चतुर्बाहुं द्विनेत्रां च केशबन्धां च मौलिनीम् ।
शुद्धश्वेताङ्गुलोपेतां ग्राहकुण्डलभूषणाम् ॥४॥
ललाटे भ्रमरकं स्यान्मौक्तिका (क) पट्टमेव वा ।
कर्णपुष्पैश्च मौक्त्येन कर्णदामै (मभि) रलङ्कृतम् ॥५॥
हारोपग्रीवसंयुक्तां मुक्तारत्नावलीं तथा ।
कुचबंधनसंयुक्ता बाहुमालाविभूषणी ॥६॥
केयूरकटकैर्युक्तां प्रकोष्ठवलयां तथा ।
मणिबन्धकटकां वा मौक्तिका (क) पौर (पूर) मेव च ॥७॥
मध्याङ्गुलं विना सर्वे मौलिक (मूलतो) रत्नाङ्गुलीयकैः ।
नीवीं च लम्बनं चैव मौक्तिका (क) पट्टयुक्तिका ॥८॥
पादजालं भुजङ्गानां गुल्फस्योपरि भूषणीम् ।
पादनूपुरसंयुक्तां पादरत्नाङ्गुलीयकैः ॥९॥
मौक्तिकोत्तरीयसंयुक्तां सर्वालङ्कारभूषणीम् ।
पुरतः सव्ये संदर्शं पुस्तकं वामहस्तके ॥१०॥
दक्षिणे परहस्ते तु चाक्षमालावधारिणीम् ।
कुण्डिका वामहस्तौ (स्ते) च धारयेत्तु सरस्वती ॥११॥
अथवा द्विभुजं कुर्यात्कुन्तलं मुकुटं भवेत् ।
दक्षिणं वरदं हस्तं वामहस्ते च पद्मकम् ॥१२॥
करण्डमुकुटं वापि हेमवर्णाङ्गशोभितम् ।
पीताम्बरं यथारत्नं मुक्ताभरणमेव च ॥१३॥
कर्णयोः स्वर्णताटङ्कं सूत्रयुक्तां सुमङ्गलाम् ।
द्विनेत्रां प्रसन्नवदनां सर्वाभरणभूषणीम् ॥१४॥

शिल्परत्न

शान्तां शारदनीरदेन्दुविमलामालेखिनीपुस्तक—
व्यासङ्गोद्यतबाहुमूर्जितवचोविज्ञानबोधात्मिकाम् ।
शुभ्राकल्पविभूषितां त्रिनयनां भास्वज्जटाशेखरां
सम्बोधाय सरस्वतीं भगवतीं वन्दे मनोज्ञाकृतिम् ॥८॥

(अध्याय २४)

---

[१] सरस्वतीम् ।

अपराजितपृच्छा

अक्षस्रचौ पुस्तकं च तथा चैव कमण्डलुः ।
चतुर्वक्त्रा च ब्रह्माणी हंसारूढा च कामदा ॥१९॥

(अध्याय २२३)

देवतामूर्तिप्रकरणम् (सूत्रधारमण्डनकृतम्)

(अथ द्वादश सरस्वत्यः)

एकवक्त्राः चतुर्भुजा मुकुटेनविराजिताः ।
प्रभामण्डलसंयुक्ताः कुण्डलान्वितशेखराः ॥७९॥

(इति सरस्वतीनां साधारणलक्षणम्)

अक्षपद्मं वीणापुस्तकं महाविद्या प्रकीर्तिता ।

(इति महाविद्या)

अक्षं पुस्तकं वीणा पद्मं महावाणी च नामतः ॥८०॥

(इति महावाणी)

वराक्षपद्मपुस्तकं शुभावहा च भारती ।

(इति भारती)

वराम्बुजाक्षपुस्तकं सरस्वती प्रकीर्तिता ॥८१॥

(इति सरस्वती)

वराक्षं पुस्तकं पद्ममार्या नाम प्रकीर्तिता । (इत्यार्या)
वरपुस्तकाक्षपद्मं ब्राह्मी नाम सुखाव हा ॥८२॥

(इति ब्राह्मी)

वरपद्मवीणापुस्तकं महाधेनुश्च नामतः ।

(इति महाधेनुः)

वरञ्च पुस्तकं वीणा वेदगर्भा तथाऽम्बुजम् ॥८३॥

(इति वेदगर्भा)

अक्षं तथाऽभयं पद्मं पुस्तकेनेश्वरी भवेत् ।

(इतीश्वरी)

अक्षं पद्मं पुस्तकञ्च महालक्ष्मीस्तोत्पलम् ॥८४॥

(इति महालक्ष्मी)

अक्षं पद्मं पुस्तकं च महाकाल्यभयं तथा ।

(इति महाकाली)

अक्षपुस्तकमभयं पद्मं महासरस्वती ॥८५॥

(इति महासरस्वती)

(अध्याय ८, पृ० १५९–६० उपेन्द्रमोहन सांख्यतीर्थ संस्करण, कलकत्ता १९३६)

पितामहस्य पार्श्वेतु स्थानकं चासनं तु वा ।
वामभागे तु सावित्रीं श्वेतरक्त (क्ता) मथापि वा ॥ १५ ॥
श्यामाङ्गवर्णमेवं वा द्विभुजं वा द्विनेत्रकम् ।
स्थानकं आसनं वापि करण्डमुकुटान्वितम् ॥ १६ ॥
अथवा केशबन्धं वा कर्णे मकरकुण्डलम् ।
दुकूलाम्बरधरं वापि पीताम्बरमथापि वा ॥ १७ ॥
सर्वाभरणसंयुक्तां वरदं वामहस्तके ।
दक्षिणे चोत्पलं कुर्याच्छेषं प्रागुक्तवन्नयेत् ॥ १८ ॥
सरस्वतीं च सावित्रीं दशतालेन कारयेत् ॥ १९ ॥
(अध्याय ५४)

रूपमण्डन

एकवक्त्रा चतुर्हस्ता मुकुटेन विराजिता ।
प्रभामण्डलसंयुक्ता कुण्डलाङ्कितशेखरा ॥ ६१ ॥
अक्षाब्जवीणा पुस्तकं महाविद्या प्रकीर्तिता ॥ (इति महाविद्या)
वराक्षाब्जं पुस्तकञ्च सरस्वती शुभाव हा ॥ ६२ ॥
(इति सरस्वती)
(अध्याय ५)

अंशुमद्भेदागम

सरस्वती चतुर्हस्ता श्वेतपद्मासनान्विता ।
जटामुकुटसंयुक्ता शुक्लवर्णा सिताम्बरा ॥
यज्ञोपवीतसंयुक्ता रत्नकुण्डलमण्डिता ।
व्याख्यानं चाक्षसूत्रं च दक्षिणे तु करद्वये ॥
पुस्तकं पुण्डरीकं च त्रिनेत्रा चारुरूपिणी ।
(पुस्तकं कुण्डिका चापि)
ऋग्वागवा कृतास्सर्वे मुनिभिस्सेविता वरा ॥
(ऋग्यजुस्सामभिवतेन)
एवं लक्षणसंयुक्ता वाग्देवी परिकीर्तिता ।
(एकोनपञ्चाशपटल)

पूर्वकारणागम

श्वेतपद्मासनासीनां शुक्लवर्णां चतुर्भुजाम् ।
जटामुकुटसंयुक्तां मुक्ताकुण्डलमण्डिताम् ॥
यज्ञोपवीतिनीं हारमुक्ताभरणभूषिताम् ।
दुकूलवसनां देवीं नेत्रत्रयसमन्वितताम् ॥

सदशं दक्षिणे हस्ते वामहस्ते तु पुस्तकम् ।
दक्षिणे चाक्षमाला च करकं वामके करे ॥
वागीश्याकृतिराख्याता दुर्गायाकृतिरुच्यते ।

(द्वादश पटल)

तन्त्रसार

हंसारूढा हरहसितहारेन्दुकुन्दावदाता
वाणी मन्दस्मिततरमुखी मौलिबद्धेन्दुरेखा ।
विद्यावीणामृतमयघटाक्षस्रजा दीप्रहस्ता
शुभ्राब्जस्था भवदभिमतप्राप्तये भारती स्यात् ॥

(शब्दकल्पद्रुम में उद्धृत)

शिल्परत्नाकर

अक्षसूत्रं पुस्तकञ्च धत्ते पद्मकमण्डलू ॥
चतुर्वक्त्रा तु सावित्री श्रोत्रियाणां गृहे हिता ॥५७॥

(एकादश रत्न)

दीपार्णव

(द्वादशसरस्वतीस्वरूपम्)

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि द्वादश वाणीलक्षणम् ।
चतुर्भुजाश्चैकवक्त्रा मुकुटेन विराजिताः ॥१॥
प्रभामंडलसंयुक्ताः कुण्डलान्वितशेखराः ।
वस्त्रालंकारसंयुक्ताः सुरूपा यौवनान्विताः ॥२॥
सुप्रसन्नाः सुतेजाढ्या नित्यं च भक्तवत्सलाः ।
दक्षिणाधश्चाक्षसूत्रं तदूर्ध्वे पद्ममुत्तमम् ॥३॥
वीणा वामकरे ज्ञेया वामाधः पुस्तकं तथा ।
दक्षिणाधक्षसूत्रं तदूर्ध्वं पुस्तकं तथा ॥४॥
वीणा वामकरे ज्ञेया तदधः पद्मपुस्तकम् ।
द्वितीया सरस्वती नाम हंसवाहनसंस्थिता ॥५॥
वरदं दक्षिणे हस्ते पद्मपत्रं तदूर्ध्वतः ।
पद्मं वामकरे ज्ञेयं वामाधः पुस्तकं भवेत् ॥६॥
दक्षिणे वरदं ज्ञेयं तदूर्ध्वे पद्ममुत्तमम् ।
पुस्तकं वामहस्ते च वामाधश्चाक्षमालिकाम् ॥७॥

(इति चतुर्थी जया नाम)

वरदं दक्षिणे हस्ते चाक्षसूत्रं तदूर्ध्वतः ।
पुस्तकं वामहस्ते च तस्याधः पद्ममुत्तमम् ॥८॥

(इति पंचमी विजया नाम)

वरदं दक्षिणे हस्ते पुस्तकं च तदूर्ध्वतः ।
अक्षसूत्रं करं वामे वामाधः पद्ममुत्तमम् ॥९॥
(इति षष्ठी सारंगी नाम)

अभयं दक्षिणे हस्ते ऊर्ध्वे चाक्षमालिकाम् ।
वीणा वामकरे ज्ञेया तस्याधः पुस्तकं भवेत् ॥१०॥
(इति सप्तमी तुंबेरी नाम)

वरदं दक्षिणे हस्ते तदूर्ध्वे पुस्तकं भवेत् ।
वीणा वामकरे ज्ञेया तस्याधः पद्ममुत्तमम् ॥११॥
(इति अष्टमी नारदी नाम)

दक्षिणे वरदमुद्रा तु पद्मं तस्योपरिस्थितम् ।
वीणां वामकरोर्ध्वे तु चाधः करे तु पुस्तकम् ॥१२॥
(इति नवमी सर्वमंठाला नाम)

पद्मं च दक्षिणे हस्ते ऊर्ध्वं तु चाक्षमालिकाम् ।
वीणां च वामहस्ते तु वामाधः पुस्तकं भवेत् ॥१३॥
(इति दशमी विद्याधरी नाम)

दक्षिणे चाक्षसूत्रं तु पद्मं तदूर्ध्वतस्ततः ।
पुस्तकं च वामहस्ते चाभयं तदधः स्थितः ॥१४॥
(इत्येकादशी सर्वविद्यादेवी नाम)

अभयं दक्षिणे हस्ते तदूर्ध्वे पद्मं दृश्यते ।
पुस्तकं वामहस्ते तु तस्याधश्चाक्षमालिकाम् ॥१५॥
(इति द्वादशी शारदी नाम)

(अध्याय १७)

—० ०—

फलक-सूची

फलक १, २ व ४	लखनऊ संग्रहालय के सौजन्य से प्राप्त
,, ३, ५ व १०	J. N. Banerjea, "The Development of Hindu Iconography" (Second Edition) Plates XVII, 2, XX 2, and XX, 5.
,, ६	कलकत्ता संग्रहालय के सौजन्य से प्राप्त
,, ७	N. K. Bhattasali, "Iconography of Buddhist and Brahmanical Sculptures in the Dacca Museum" (plate LXIII)
,, ८	विन्देश्वरी प्रसाद सिंह, "भारतीय कला को बिहार की देन" (फलक ११३)
,, ९	लन्दन संग्रहालय के सौजन्य से प्राप्त
,, ११	Archaeological Survey of India, Annual Report, 1911-12 (plate XVIII).

सहायक ग्रन्थ-सूची

क्रम संख्या	पुस्तक	लेखक । प्रकाशन
१	अग्नि पुराण	एशियाटिक सोसाइटी, बंगाल, प्र० (राजेन्द्र लाल मित्र)
२	अथर्व वेद-संहिता	सायण-भाष्य, मुरादाबाद, प्र० (राम चन्द्र शर्मा)
३	अमर-कोश	भानुजी दीक्षित टीका
४	ऐतरेय-ब्राह्मण	आनन्दाश्रम प्र०
५	ऋग्वेद-संहिता	राम गोविन्द त्रिवेदी व गौरी नाथ झा
६	छान्दोग्य उपनिषद्	आनन्दाश्रम प्र०
७	जैन-धर्म	कैलाश चन्द्र शास्त्री
८	देवी-भागवत-पुराण	गुरु मंडल ग्रंथमाला प्र०
९	द्रव्य-गुण-विज्ञान	प्रियव्रत शर्मा
१०	निरुक्त	श्री वेंकटेश्वर प्र०
११	नैघण्टुक	गुरुमंडल ग्रंथमाला प्र०
१२	पद्म-पुराण	आनन्दाश्रम प्र०
१३	ब्रह्म-पुराण	(१) आनन्दाश्रम प्र०
		(२) गुरु मंडल ग्रंथमाला प्र०
१४	ब्रह्म-वैवर्त पुराण	(१) आनन्दाश्रम प्र०
		(२) गुरु मंडल ग्रन्थमाला प्र०
१५	ब्रह्माण्ड-पुराण	श्रीवेंकटेश्वर प्र०
१६	भागवत पुराण	गीता प्रेस प्र०
१७	भारतीय कला को बिहार की देन	विन्धेश्वरी प्रसाद सिंह
१८	भारतीय संस्कृति में जैन-धर्म का योगदान	हीरालाल जैन
१९	मत्स्य-पुराण	(१) आनन्दाश्रम प्र०
		(२) हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, प्र०
२०	महाभारत	(१) प्रताप चन्द्र राय
		(२) गीता प्रेस प्र०
२१	मार्कण्डेय-पुराण	गुरु मंडल ग्रंथमाला प्र०
२२	रामायण (वाल्मीकीय)	राम नारायण लाल इलाहाबाद, प्र० (द्वारिका प्रसाद शर्मा)
२३	लिंग-पुराण	श्री वेंकटेश्वर प्र०
२४	वाचस्पत्यम्	तारानाथ तर्कवाचस्पति
२५	वामन-पुराण	श्री वेंकटेश्वर प्र०

क्रम संख्या	पुस्तक	लेखक : प्रकाशन
२६	वायु-पुराण	श्री वेंकटेश्वर प्र०
२७	विष्णु-पुराण	जी० बी० भट्टाचार्या प्र०
२८	विष्णु-धर्मोत्तर-पुराण	श्री वेंकटेश्वर प्र०
२९	वैदिक पुरा कथा-शास्त्र*	रामकुमार राय
३०	शतपथ-ब्राह्मण	श्री वेंकटेश्वर प्र०
३१	शब्द-कल्पद्रुम	राजा राधाकान्त देव
३२	सरस्वती-रहस्य-उपनिषद्	तत्व विवेचक प्र०
३३	स्कन्द-पुराण	श्री वेंकटेश्वर प्र०
३४	हिन्दू-संस्कार	राजबली पाण्डेय
35	Aitareya Brahmana	Martin Haug
36	Aspects of Indian Religious Thought	S. B. Das Gupta
37	Atharva Veda	(i) R. T. H. Griffith (ii) W. D. Whitney
38	Eastern Art (Vol. I)	
39	Elements of Hindu Iconography	T. A. Gopinatha Rao
40	Epics, Myths & Legends of India	P. Thomas
41	Examples of Indian Sculpture in British Museum	Indian Society, London
42	Hindu America	Chaman Lal
43	Iconography of Buddhist and Brahmanical Sculptures in the Dacca Museum	N. K. Bhattasali
44	Jain Iconography	B. C. Bhattacharya
45	The Development of Hindu Iconography	J. N. Banergea
46	The Jain Stupa and Other Antiquities of Mathura	Vincent A. Smith
47	Rigveda Samhita	F. Max Müller
48	The Religion and Philosophy of Veda and Upanishads	A. B. Keith
49	Yajurveda	R. T. H. Griffith
50	Index-Mahabharata	P. Sorenson
51	Index-Puranas	Yashpal Tandon

* Hindi translation of "Vedic Mythology" by A. A. Macdonell.

क्रम संख्या	पुस्तक	लेखक : प्रकाशन
52	Index-Vedas	(i) Macdonell & Keith (ii) Ram Kumar Rai
53	Archaeological Survey of India, Annual Report—1911-12	
54	A Short Guide Book to the Archaeological Section of the Prov. Museum, Lucknow	V. S. Agrawala
55	Catalogue and Hand Book of the Archaeological Collections in the Indian Museum, Calcutta, Part II	John Anderson
56	Catalogue—Prov.Museum, Lucknow	
57	Epigraphia Indica, Vol. I (1892).	
५८	पुराणम्, जनवरी १९६२	आनन्द स्वरूप गुप्त
५९	नाद-रूप, जनवरी १९६३	ब्रह्मर्षि देवरात
६०	प्रज्ञा, मार्च १९६३	वासुदेव शरण अग्रवाल

विष्णु के साथ सरस्वती, लखनऊ संग्रहालय

फलक २

हंस वाहन सहित सरस्वती, लखनऊ संग्रहालय

वेदिका स्तम्भ पर सरस्वती, भरहुत

फलक ४

कंकाली टीला से प्राप्त सरस्वती, लखनऊ संग्रहालय

सरस्वती, खिचिंग

फलक ६

मालदा से प्राप्त सरस्वती, कलकत्ता संग्रहालय

वज्रयोगिनी से प्राप्त सरस्वती, ढाका संग्रहालय

फलक ८

कांसे की सरस्वती मूर्ति, पटना संग्रहालय

संगमरमर की सरस्वती मूर्ति, लंदन संग्रहालय

फलक १०

बृहदीश्वर मंदिर की सरस्वती मूर्ति, तंजौर

मुद्रा पर अंकित सरस्वती, भीटा

LIST OF PUBLICATIONS OF THE DEPARTMENT OF ANCIENT INDIAN HISTORY CULTURE & ARCHAEOLOGY

I. *Manindra Chandra Nandi Lectures*

1. The Age of Imperial Guptas—*R. D. Banerji* — *out-of-print*
2. Some Aspects of Ancient Hindu Polity—*D. R. Bhandarkar* — Rs. 6.00
3. Ancient Indian Economic Thought—*K. V. R. Aiyangar* — Rs. 7.00

II. *Monographs of the Department of A.I.H.C. & Archaeology*

1. From Alexander to Kaniṣka—*A. K. Narain* — Rs. 10.00
2. Śrāvastī—*K. K. Sinha* — Rs. 20.00
3. Skanda-Kārttikeya—*P. K. Agrawala* — Rs. 10.00
4. Sarasvatī—*Sushila Khare* — Rs. 5.00

III. *Memoirs of the Department of A.I.H.C. & Archaeology*

1. Seminar papers on the chronology of the Punch-Marked Coins—*Ed. A. K. Narain & Lallanji Gopal* — Rs. 17.00
2. Seminar papers on the Local Coins of Ancient India—*Ed. A. K. Narain assisted by J. P. Singh & Nisar Ahmad* — Rs. 15.00
3. Report on Rajghat Excavations: In two volumes—*A. K. Narain and colleagues* — *(in press)*